Peer Reviewed & Refereed Journal अंक : 03 वर्ष : 01, जुलाई -सितम्बर 2021

साहित्यिक, सांस्कृतिक एवं सामाजिक ऑनलाइन त्रैमासिक - पत्रिका

www.epradeep.com

ई - प्रदीप

सम्पादक

डॉ. राहुल उठवाल

डिवाइन फैथ फेलोशिप सोसाइटी द्वारा प्रकाशित हिन्दी साहित्य की पत्रिका

सुहृदय विद्वतजन,

"ई-प्रदीप" त्रैमासिक ऑनलाइन पत्रिका के **आगामी** अंक **अक्तूबर-दिसम्बर 2021** हेतु आपके शोध-आलेख, कहानियां, कविताएँ, पुस्तक समीक्षाएं एवं अन्य विधाओं की रचनाएँ आमंत्रित हैं। कृपा कर अपनी रचनाएँ हिन्दी यूनिकोड फॉण्ट में ही भेजें किसी अन्य फॉण्ट में रचनाएँ स्वीकार नही की जायेगी। अपनी रचना के साथ अपना एक नवीनतम फोटो एवं जीवन परिचय निम्नलिखित मेल आई डी पर अवश्य भेजें- eppatrika@gmail.com

शोध-आलेख भेजने वाले लेखकों के लिए निर्देश :

- **शोध आलेख निम्न प्रारूप में ही भेजें।**
- शोध आलेख विषय
- नाम, विभाग का नाम, संस्थान का नाम अथवा पता, ई-मेल एवं मोबाइल नंबर
- शोध सारांश जो 200 शब्दों से अधिक न हो
- बीज शब्द, भूमिका, निष्कर्ष
- संदर्भ में लेखक का नाम, प्रकाशन वर्ष, पुस्तक का नाम, प्रकाशन का नाम, प्रकाशन का स्थान अवश्य लिखें। ध्यान रखें कि रचनाएँ पूर्णत: मौलिक हों। पूर्व प्रकाशित रचना यदि अज्ञानतावश प्रकाशित हो जाती है तो उसका पूर्ण उत्तरदायित्व साहित्यकार एवं रचनाकार का होगा।
- शोध-पत्र 3000 - 3500 शब्दों से अधिक न हो तथा 200 शब्दों का सारांश भी प्रेषित करें। शोध आलेख ए-4 साइज़ के कागज पर कंप्यूटर से एक ओर यूनिकोड अथवा मंगल फॉण्ट साइज़ 14 में टंकण किया हुआ ही भेजें। भेजते समय शोध पत्र एम एस वर्ड फाइल में सीधे दी गयी ई-मेल आई डी पर डाउनलोड करें, मेल बॉक्स में कॉपी पेस्ट न करें। किसी अन्य फॉण्ट, स्केन, पीडीएफ अथवा मेल बॉक्स में कॉपी पेस्ट कर भेजी गयी रचना किसी भी स्थिति में स्वीकार नहीं की जायेगी। उसके लिए अलग से कोई प्रतिउत्तर भी नहीं दिया जायेगा।
- यदि शोध-आलेख एवं भेजी गयी रचना कापीराईट का उल्लंघन करती है अथवा किसी अन्य रचना या पूर्व प्रकाशित रचना का कोई अंश बिना प्रकाशक एवं लेखक की पूर्वानुमति के प्रकाशित हो जाता है तो उसका पूर्ण उत्तरदायित्व लेखक एवं रचनाकार का होगा। संपादक परोक्ष या अपरोक्ष रूप से इसके लियें उत्तरदायी नही होगा।
- कृपया शोध-आलेख भेजने के पूर्व यह सुनिश्चित कर लें कि उसमे व्याकरण एवं मात्राओं की गलतियाँ किसी भी स्थिति न हों।
- शोध पत्र के प्रकाशन हेतु ई-प्रदीप पत्रिका की वेबसाइ www.epraddep.com पर दिये गये "मौलिकता का प्रमाण-पत्र" (Certification of Originality) डाउनलोड करें एवं उसे पूर्ण भरकर अवश्य भेजें, इसमें शोध-आलेख अन्यत्र न भेजे जाने की पुष्टि की गयी हो। शोध-पत्र की सामग्री कहीं से चोरी की गयी (plagiarism) नहीं होनी चाहिए। शोध पत्र में सारणी एवं चित्रों का प्रयोग लेख के बीच में न करते हुए अंत में सन्दर्भ या संलग्नक के रूप में करें।
- कृपाया लेटेस्ट अपडेट के लिए निम्न लिंक https://chat.whatsapp.com/Gp9fGiJZgvCBqLxyou57xY द्वारा व्हाट्सएप्प समूह एवं टेलीग्राम एप https://t.me/joinchat/HDaPVF1w0YwPGJlo द्वारा जुड़ जाएँ।

प्रधान सम्पादक- डॉ. राहुल उठवाल

सम्पर्क

ई - प्रदीप पत्रिका ऑनलाइन (त्रैमासिक)
आई - 605, वी.वी.आई.पी . एड्रेसेज़, राजनगर
एक्सटेंशन गाजियाबाद, उ. प्र. 201017
दूरध्वनि: 7066508089, **ई-मेल**:
eppatrika@gmail.com, info@epradeep.com

पत्रिका शुल्क - ई - प्रदीप पूर्ण रूप से निशुल्क है।

यदि आप ई - प्रदीप के प्रकाशन हेतु स्वेछा से आर्थिक सहयोग करना चाहते हैं तो निम्नलिखित बैंक अकाउंट में सहयोग राशि दे सकते हैं- खाता संख्या 436010100229135, आई.एफ.एस.सी UTIB0000436, नाम: Rahul Uthwal/ यू.पी.आई 7066508089@axisbank अथवा फोनपे / गूगलपे / पेटीएम 7066508089

- ई -प्रदीप से संबंधित किसी भी जानकारी के लिए कृपया ई -प्रदीप के ई-मेल पर मेल करें अथवा दूरभाष पर कार्यालय समय दोपहर 12:00 से संध्या 4:00 बजे तक सम्पर्क करें।
- ई-प्रदीप में प्रकाशित की गयी सभी विधाओं की रचनाएँ लेखकों एवं रचनाकारों की मौलिक रचनाएँ हैं। प्रकाशक और सम्पादक किसी भी रूप में इनके लिएं उत्तरदायी (जिम्मेदार) नहीं होगा।
- प्रकाशित सामग्री के उपयोग के लिए लेखक, अनुवादक एवं डिवाइन फैथ फेलोशिप सोसाइटी की अनुमति आवश्यक है।
- ई-प्रदीप पत्रिका से संबंधित समस्त विवाद चदौसी, जनपद सम्भल न्यायालय के अधीन होगा।

पत्रिका मे व्यक्त विचार लेखकों के अपने विचार हैं। इनसे सम्पादन मंडल का सहमत होना अनिवार्य नहीं है।

डिवाइन फैथ फेलोशिप सोसाइटी द्वारा प्रकाशित हिन्दी साहित्य की पत्रिका

Peer Reviewed & Refereed Journal

www.epradeep.com **ई - प्रदीप** अंक : 03 वर्ष : 01 जुलाई-सितम्बर 2021

साहित्यिक, सांस्कृतिक एवं सामाजिक ऑनलाइन त्रैमासिक - पत्रिका

सम्पादकीय समिति

संरक्षक

डॉ. डी. एन. शर्मा

पूर्व प्राचार्य एवं अध्यक्ष (हिन्दी विभाग)

एम. जी.एम. महाविद्यालय, सम्भल, उ. प्र.

प्रधान सम्पादक

डॉ. राहुल उठवाल

पूर्व कनिष्ठ आयुक्त अधिकारी,

भारतीय सेना

संयुक्त सम्पादक

डॉ. प्रवीन चंद बिष्ट

सहा. प्रोफ़ेसर एवं विभागाध्यक्ष (हिन्दी)

रामनारायण रुइया स्वायत्त

महाविद्यालय, मुम्बई

सह- सम्पादक

डॉ. ईश्वर पवार

एसो प्रोफ़ेसर एवं विभागाध्यक्ष

सी टी बोरा महाविद्यालय, शिरूर

महाराष्ट्र

सह- सम्पादक

डॉ. नीलम ऋषिकल्प

एसो. प्रोफ़ेसर (हिन्दी विभाग)

राम लाल आनन्द महाविद्यालय,

दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

सह- सम्पादक

डॉ. सीमा शर्मा

एसो. प्रोफ़ेसर (हिन्दी)

जानकी देवी मेमोरियल कॉलेज,

दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

www.epradeep.com **ई - प्रदीप** अंक : 03 वर्ष : 01 जुलाई-सितम्बर 2021
साहित्यिक, सांस्कृतिक एवं सामाजिक ऑनलाइन त्रैमासिक - पत्रिका

पीर रिव्यू समिति

1. **प्रो. नवीन चन्द्र लोहानी**
   विभागाध्यक्ष (हिन्दी विभाग)
   चौ.चरण सिंह विश्वविद्यालय, मेरठ

2. **डॉ. सतीश पाण्डे**
   पूर्व विभागाध्यक्ष (हिन्दी विभाग)
   के.जे. सौमया स्वायत्त महाविद्यालय, विद्याविहार, मुम्बई
   सम्पादक—समीचीन (यू जी सी केयर लिस्टिड जर्नल)

3. **डॉ. महेश 'दिवाकर' (डी. लिट्)**
   साहित्य भूषण से सम्मानित
   पूर्व विभागाध्यक्ष (हिन्दी विभाग)
   जी. एस. हिन्दू महाविद्यालय चांदपुर-स्याऊ, बिजनौर

4. **डॉ. मुकेश चन्द्र गुप्ता**
   एसो. प्रोफ़ेसर एवं विभागाध्यक्ष (हिन्दी विभाग)
   एम. एच. महाविद्यालय, मुरादाबाद

5. **प्रो. विजय कुमार रोड़े**
   विभागाध्यक्ष (हिन्दी विभाग)
   सावित्रीबाई फूले विश्वविद्यालय, पुणे

6. **डॉ. अनीता कपूर**
   लेखक / कवि / पत्रकार
   हेवर्ड, कैलिफोर्निया, यू एस ए

7. **डॉ. गंगा प्रसाद शर्मा 'गुणशेखर'**
   साहित्य शिरोमणि
   पूर्व प्रोफ़ेसर (हिन्दी विभाग)
   ग्वांगडोंग यूनिवर्सिटी ऑफ फॉरेन स्टडीज, चीन, ग्वांगडोंग,
   गुआंगझोउ, बाईयुन, चीन

8. **श्री. बी. एल. आच्छा**
   पूर्व प्राध्यापक एवं शिक्षाविद्
   उच्च शिक्षा विभाग,
   मध्य प्रदेश शासन

9. **डॉ. वेदप्रकाश सिंह**
   सहा. प्रोफ़ेसर (हिन्दी विभाग)
   ओसाका विश्वविद्यालय, जापान

10. **डॉ. रीना सिंह**
    असिस्टेंट प्रोफ़ेसर
    आर. के. तलरेजा महाविद्यालय,
    उल्हासनगर, जिला थाने, महाराष्ट्र

*** सभी पद अवैतनिक हैं।**

डिवाइन फैथ फेलोशिप सोसाइटी द्वारा प्रकाशित हिन्दी साहित्य की पत्रिका

Peer Reviewed & Refereed Journal

इस अंक में ....

कविताएँ

- पूनम की प्रतीक्षा, औरत, धर्म युद्ध, फटा बादल, वह पल..........8-14
  कमलेश बख्शी
- एक अभिनेता की इक्यावनवीं मृत्यु पर.................................15-19
  प्रेम रंजन अनिमेष
- विजय का ढोल बजाते हैं, प्रेमांगन, उतना ही अधिक डरेगा.......20-23
  डॉ. प्रवीण चंद्र बिष्ट
- एक वर्ग..24-25
  सारिका ठाकुर
- तुम्ही तो थे पिया..26
  कंचन सिंह 'सर्वरी'
- कैसे कहूँ तेरे बिन मन ना लगें.......................................27
  शमा परवीन
- बोलो कैसे बली है मौन..28
  अलका 'सोनी'
- मजबूरी और मजदूरी..29
  मुकेश कुमार ऋषि वर्मा

♦ आज भी स्त्री नहीं हुई आज़ाद.................................30
चंद्रप्रभा सिंह

लघु कथाएं

♦ कथनी और करनी..31
जितेन्द्र 'कबीर'
♦ चादर: मानवीय सृष्टि की...32-34
वर्तिका राय

शोध-आलेख

♦ भारतीय शिक्षा पद्धति और हिन्दी सिनेमा......................35-51
डॉ. सीमा शर्मा
♦ इस बेहद संकरे समय में एक बेचैन कवि का एकालाप.........52-65
वेद प्रकाश सिंह
♦ संत गरीबदास का समाजपरक मूल्यांकन.........................66-69
डॉ. अरुणा दुबलिश
♦ नाटक और रंगमंच -- स्वरूप और संभावनाएँ 70-73
डॉ. वसुधा सहस्त्रबुध्दे

सम्पादकीय

कोरोना महामारी के चलते भारत ही नहीं संपूर्ण विश्व में मानव जीवन अस्थिर सा हो गया है । बच्चों का बचपना उनसे छिनता प्रतीत हो रहा है । वे चारदीवारी में कैद होकर रह गए हैं । इसी दौरान पर्यावरण में भी विविध प्रकार के परिवर्तन देखने को मिल रहे हैं । इन विषम परिस्थितियों के बावजूद 'ई प्रदीप' पत्रिका के संपादन मंडल ने अपने-अपने स्तर से लेखकों से संपर्क किया और इस अंक की सामग्री जुटाने में सफल हुए।

इस अंक में मुख्य रूप से साहित्य की तीन विधाओं की रचनाओं को शामिल किया गया है जिसमें कविता, लघु-कथाएं और शोध-आलेख हैं । इस अंक की कविताएं प्रकृति के मनोरम दृश्यों, स्त्री के अधिकारों की चिंता, मनुष्य की मानसिकता और उसका संघर्ष, कोरोना से लड़ने का साहस तथा प्रेम जैसे पवित्र संबंध को अभिव्यक्त करने में सक्षम हैं।

लघु-कथाओं के अंतर्गत 'कथनी और करनी' में बच्चों के मानसिक अंतर्द्वंद्व को अभिव्यक्ति दी गई है । दूसरी कहानी 'चादर : मानवीय सृष्टि की' एक ऐसी कहानी है जो धूर गरीबी के बाबजूद बच्चों को मेहनत से पैसा कमाने की ओर प्रेरित करती है।

इस अंक में चार शोध-आलेख शामिल किए गए हैं । चारों आलेख विविध विषयों पर केन्द्रित हैं। 'भारतीय शिक्षा पद्धति और हिंदी सिनेमा' इसके तहत भारतीय शिक्षा पद्धति के मूल्यपरक सिद्धांतों को प्राथमिकता दी गई है।

डिवाइन फैथ फेलोशिप सोसाइटी द्वारा प्रकाशित हिन्दी साहित्य की पत्रिका

'इस बेहद संकरे समय में एक बेचैन' के माध्यम से अच्युतानंद मिश्र की कविताओं में व्यक्त समकालीन परिवेश को बड़ी सटीकता से रेखांकित किया गया है। मध्ययुगीन संतों ने तत्कालीन समाज के मार्गदर्शन में महत्वपूर्ण योगदान दिया था। 'संत गरीबदास का समाजपरक मूल्यांकन' एक ऐसा आलेख है जो सम्पूर्ण संत समाज के सामाजिक दायित्व का प्रतिनिधित्व करता है। यह मानव को अज्ञान, निराशा व शोकयुक्त वातावरण से निकालकर ज्ञान, आशा एवं उत्साह के मार्ग पर प्रशस्त करता है। नाटक व रंगमंच के इतिहास का फलक बहुत व्यापक रहा है। 'नाटक और रंगमंच - स्वरूप' के अंतर्गत प्राचीन काल से अब तक के नाटक और रंगमंच की यात्रा को सांकेतिक रूप में ही सही किन्तु रोचकता के साथ अभिव्यक्त किया गया है।

हम इस अंक के सभी कवियों कहानीकारों व समीक्षकों का तहे दिल से आभार व्यक्त करते हैं। हम अपने पाठक वर्ग से यह अपेक्षा रखते हैं कि प्रकाशित सामग्री पर प्रतिक्रिया अवश्य दें ताकि आगामी अंक को और अधिक प्रभावी बनाया जा सके। हम अपनी विद्वत परीक्षक मंडल का भी तहे दिल से धन्यवाद ज्ञापित करते हैं जिनका समय-समय मार्गदर्शन मिलता रहता है। आशा है कि आप भविष्य में भी इसी तरह सहयोग देते रहेंगे। अस्तु !

संयुक्त संपादक

डॉ. प्रवीण चंद्र बिष्ट

पूनम की प्रतीक्षा

-कमलेश बख्शी

बिजली नहीं थी कसबे-कसबे में
आंगन मे सोते थे गर्मी में
पूनम की प्रतीक्षा रहती
पूनम की प्रतीक्षा रहती
भरपूर उजाला फैलेगा
घर मे गाय भैंस भरपूर दूध
खीर बनती हर पूनम को
रखी रहती
रखी रहतीं खुली हवा मे
पतली चूनर से ढकी
ठंडी होती बांटतीं मां
पहले हम बच्चो को बांटती
फिर दे बाजी को खुद खाती

औरत

-कमलेश बख्शी

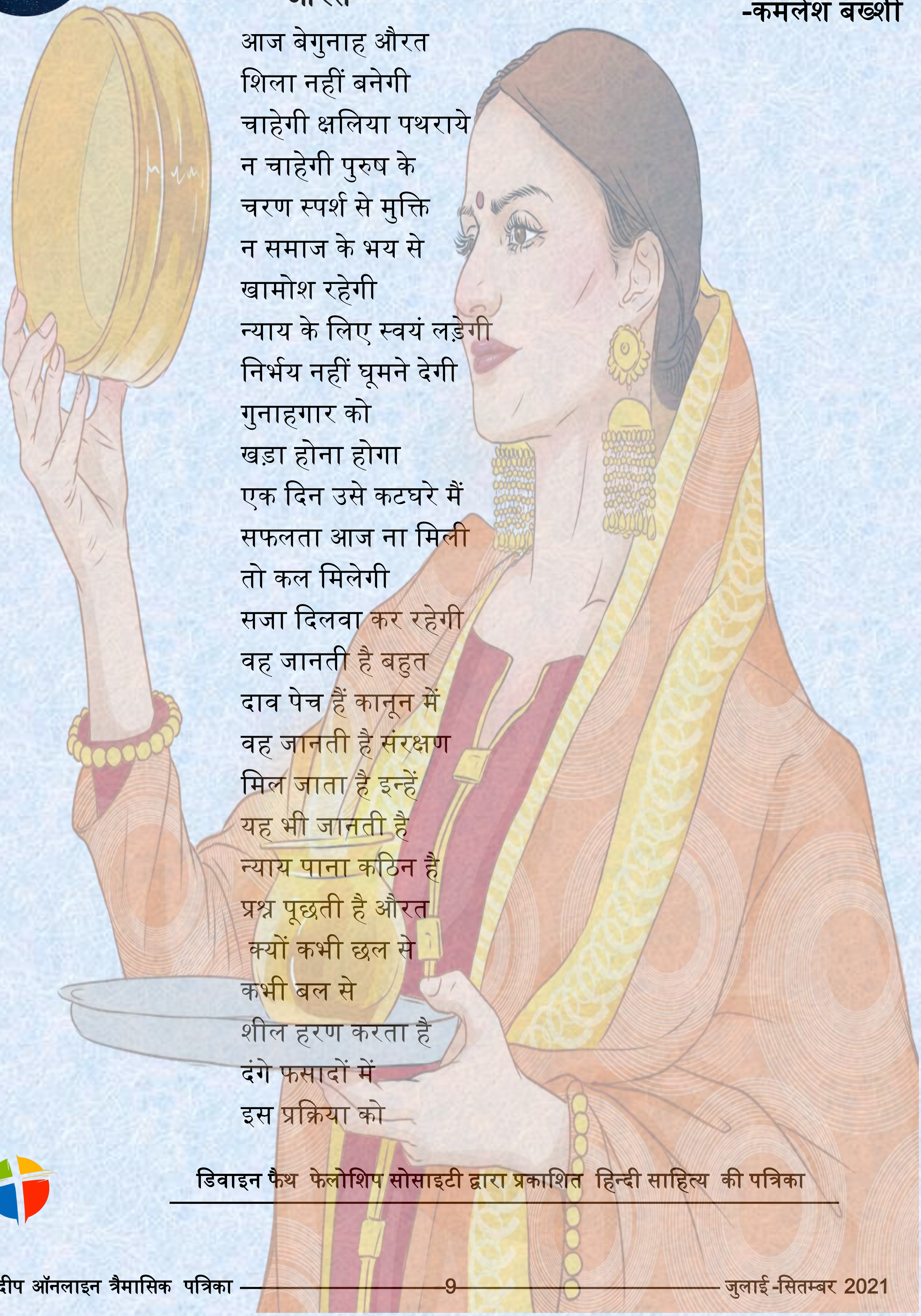

आज बेगुनाह औरत
शिला नहीं बनेगी
चाहेगी क्षलिया पथराये
न चाहेगी पुरुष के
चरण स्पर्श से मुक्ति
न समाज के भय से
खामोश रहेगी
न्याय के लिए स्वयं लड़ेगी
निर्भय नहीं घूमने देगी
गुनाहगार को
खड़ा होना होगा
एक दिन उसे कटघरे मैं
सफलता आज ना मिली
तो कल मिलेगी
सजा दिलवा कर रहेगी
वह जानती है बहुत
दाव पेच हैं कानून में
वह जानती है संरक्षण
मिल जाता है इन्हें
यह भी जानती है
न्याय पाना कठिन है
प्रश्न पूछती है औरत
क्यों कभी छल से
कभी बल से
शील हरण करता है
दंगे फसादों में
इस प्रक्रिया को

डिवाइन फैथ फेलोशिप सोसाइटी द्वारा प्रकाशित हिन्दी साहित्य की पत्रिका

फिल्माता है
निर्वस्त्र अपने हाथों से
शील ढाकती चीखती
गुहार करती औरत को
भीड़ के लिए
हंसी का पात्र बनाता है
औरत काली बन जाना
चाहती है
पुरुष जब अबोध
बच्चियों को रोंद
फेंक देता है
झाडी झंकारों मे
मासूम की फटी आंखें
चीखें कैसे भुला
जी सकता है आदमी
गुनहगारों की मुडमाल
पहनना चाहती है औरत
रोज ही छपती है
बलात्कारियों की खबरें
लगी फांसी किसी को
खबर आती नही
चशमदीद गवाह नहीं
क्या औरत स्वयं गवाह नहीं
पूछती है औरत
बलात्कारियों हत्यारों से
तुम्हारी आत्मा ने
कभी धिक्कारा नहीं
आज औरत निःसंकोच
अतीत में भोगी पीड़ा से
भी पर्दा उठा रही है।

धर्म युद्ध

-कमलेश बख्शी

आज का धर्म युद्ध
कौरव लड़ रहे हैं
पांडव धराशाही हुए
रावणों ने
अनगिनत राम मारे
इस अनहोनी में
चाणक्य सिखा रहा
भ्रष्टाचार के नए गुर
राजनीति की तिकड़म
ऊपर से नीचे तक इशारा
नीचे से ऊपर तक हिस्सा
आज के सच पर
महाभारत रामायण
रचो कोई
आने वाली पीढ़ी
जान पायेगी
आज का इतिहास

फटा बादल

-कमलेश बख्शी

चल रही थी हवा तेज
भांग पीये बहके से
थे मेघा
कच्चे घरौं का
छोटा सा था गाँव
अचानक फटा बादल
चौंकते लड्खडाते भागे
बूढ़े बच्चे जवान
भीषण शोर चीखैं
फिर
सब बह गये
बेअवाज़
लापता की फेहरिस्त मैं
नाम दर्ज हो गया
कोइ निशां ही न रहा
न गांव
न घर
न लोग
था चारों तरफ
लहलहाता समुद्र

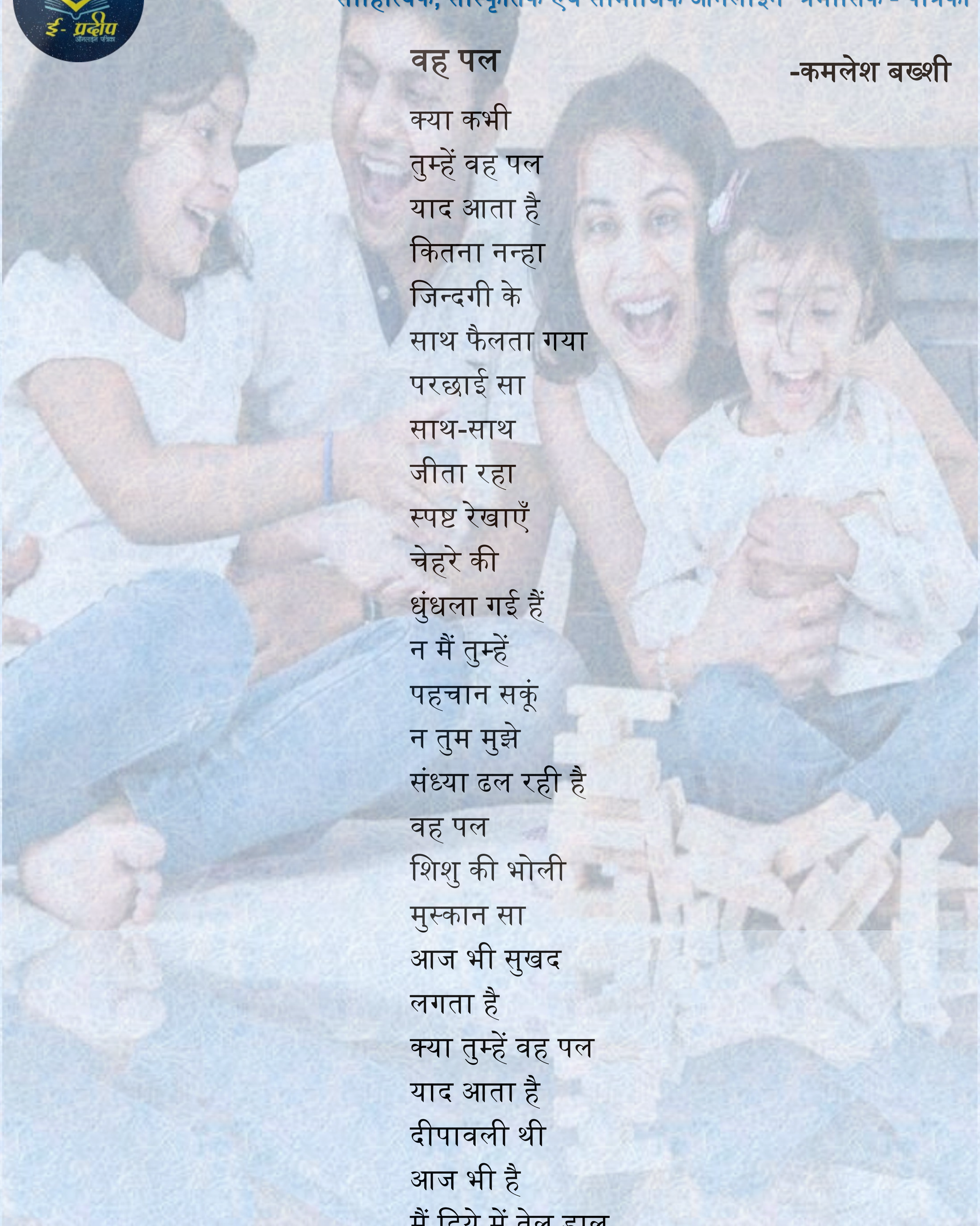

वह पल

-कमलेश बख्शी

क्या कभी
तुम्हें वह पल
याद आता है
कितना नन्हा
जिन्दगी के
साथ फैलता गया
परछाई सा
साथ-साथ
जीता रहा
स्पष्ट रेखाएँ
चेहरे की
धुंधला गई हैं
न मैं तुम्हें
पहचान सकूं
न तुम मुझे
संध्या ढल रही है
वह पल
शिशु की भोली
मुस्कान सा
आज भी सुखद
लगता है
क्या तुम्हें वह पल
याद आता है
दीपावली थी
आज भी है
मैं दिये में तेल डाल

बाती डुबा रही थी
तुमने दीप जला दिया
उस पर रख दी
फुलझड़ी
खिलखिलाती
रंग बिखराती
फुलझड़ी मेरी
हथेली में थमा
हंसते भाग गये थे
क्या कभी
तुम्हें वह पल
याद आता है

कमलेश बख्शी
जन्म- इटारसी (मध्यप्रदेश)
मातृभाषा - पंजाबी
लेखन-हिंदी, अन्य भाषाएं- मराठी, गुजराती, पंजाबी, इंग्लिश भाषा का ज्ञान
प्रकाशित कृतियाँ- कच्चे पक्के रास्ते,(1980) सुरंग से बाहर, (1981) अंतहीन भटकन (1982) विधिचंद (1984) बाल उपन्यास, दिशा खोजती जिंदगियाँ (2000) सभी उपन्यास, क्यों कहूँगी सच कहूँगी (1979) नया मोड़ (1989) कब तक (1989), मर्यादा (2000) उखड़ा वृक्ष धरती से जुड़ा (2001), सावधान ब्रिज आइस्ड है (2002) सभी कहानी संग्रह, नील गगन ले (यात्रा वृत्तान्त), आकाशवाणी से कविता,कहानी, नाटकों का प्रसारण कई सालों तक हुआ।
लघुकथा संग्रह प्रकाशाधीन, एवं अन्य कहानी, कविता संग्रह प्रकाशाधीन 2021
पुरस्कार- सोवियत नारी मास्को से प्रकाशित पत्रिका में प्रकाशित कहानी "नया मोड़" वर्ष की श्रेष्ठ रचना के अंतर्गत पुरस्कृत(1980) प्रियदर्शिनी पुरस्कार श्री किशाराम लेखराज रुपानी मेमोरियल अवार्ड (हिंदी साहित्य) , राष्ट्रीय हिंदी सेवी सहस्त्राब्दी सम्मान दिल्ली में, संयोग कला मंच मुंबई का सम्मान। अन्य संस्थाओं से अनेक सम्मान प्राप्त हुए।
निवास स्थान- मुंबई, संप्रति- स्वतंत्र लेखन

एक अभिनेता की इक्यावनवीं मृत्यु पर

-प्रेम रंजन अनिमेष

मृत्यु को जिया
हर बार
परदे पर

और देखने वालों में
आँखें नम हुईं कई
साथ ही देख कर कितनों ने
दाद दी तालियाँ भी बजायीं

जीवन को सराहना
मिली हो न हो
सराहा गया बहुत
मौत के
अभिनय के लिए

समीक्षकों कलाविदों ने भी कहा
कि यह मृत्यु अभूतपूर्व
हाथों हाथ लिया हर बार
कि जान फूँक दी
जान जाने के दृश्य में
मौत को कर दिया जीवंत

एक उसी दृश्य के लिए
उमड़ती भीड़ लगातार
लोगों को भी शायद लगता अच्छा
साथ उसी के मरना
हर बार थोड़ा थोड़ा

चुंबक सा खींचता
वह अभिनय जीवन से जाने का
वे तस्वीरें खूब चलीं
चलचित्र चर्चित सफल हुए
और उनके साथ मैं

जीवन में कुछ और करने के लिए न सही
बार-बार मरने के लिए ही

अपनी तरफ से करता कोशिश
कि न्याय कर सकूँ हर मौत के साथ
कभी आग के पास कभी पानी के तट पर
कभी हवा में झूलते कभी धूल मिट्टी से सने
आँखें मुँदी खुली अधखुली
होंठ काँपते लरजते बोलना चाहते
लहूलुहान कभी बिना किसी निशान
बैठे खड़े लड़खड़ाते चीखते मुस्कुराते जैसे नींद में
धीरे धीरे अचानक भीड़ में अकेले...

कोशिश की कि करूँ ऐसे
जैसे पहली बार कर रहा
मरूँ इस तरह कि लगे
पहली दफा मर रहा

निभाव इतना असरदार
मानो मृत्यु से साक्षात्कार
पहले पहल पहली ही बार

फिर उसके बाद आते जो प्रस्ताव
जैसी भूमिकाएँ जो किरदार
उनमें और कुछ हो न हो
मरना तय होता आखिरकार

विनम्रता से करता इसरार
कुछ अलग कुछ हट कर करने दीजिये
अबकी मत मरने दीजिये

तो पीठ थपथपाते आश्वस्त करते
निर्माता निर्देशक
कि इस बार मरना बिलकुल नया होगा
ऐसा जैसे पहले किसी ने नहीं देखा होगा

लेकिन जब चलता गया यही सिलसिला
पूरे पचास बार
तो लगा अब बस हुआ बहुत
और कर दी सविनय अवज्ञा की घोषणा
कि अब भूमिका वही करूँगा
किरदार वही जिऊँगा
जिसमें जीते जी हो कुछ करना

पर यही इस जगत की रीत
शायद किसी को हुआ नहीं भरोसा
कि यह आदमी जिंदा रहते हुए
कुछ कर सकता

अपनी शर्तों पर अपनाता कोई कहाँ
काम मिलना बंद हो गया
नौबत आ गयी भूखों मरने की

जीवन में पहली बार
सारी शर्तें कर स्वीकार
वैसे भी मरण से
क्या कम ऐसा वरण
माँगना ही मरण समान

हालाँकि बनाने वाले ने
दिया दिलासा
बहुत ही वास्तविक
और स्वाभाविक होगी
यह मृत्यु मेरी
और चरम शिखर पर
देखने वालों को होगा जिसका
सचमुच इंतजार

पर दिल पर बहुत था भार
इस बार
जैसे पत्थर हजारों हजार
'लाइट कैमरा ऐक्शन'
गूँजा जैसे ही स्वर
साँसें लेना हो गया दूभर
और रुक सी गयी धड़कन

मरता
क्या क्या न करता
आखिर जाना पड़ा
माँगने मौका
बस इतना रहा याद
कि मरना था हृदयघात से
पटकथा के अनुसार

फर्स्ट टेक... परफेक्ट !
कहा दिग्दर्शक ने
दिखलाते अँगूठा
फिर भी देख निर्विकार
जान पड़ा सबको जैसे अब तक
दृश्य में ही खोया हुआ

जबकि घूम रही थी रील
मुँदी पलकों के तले
मुसकाता मानो नींद में
पढ़ रहा था मैं

विजय का ढोल बजाते हैं

डॉ. प्रवीण चंद्र बिष्ट

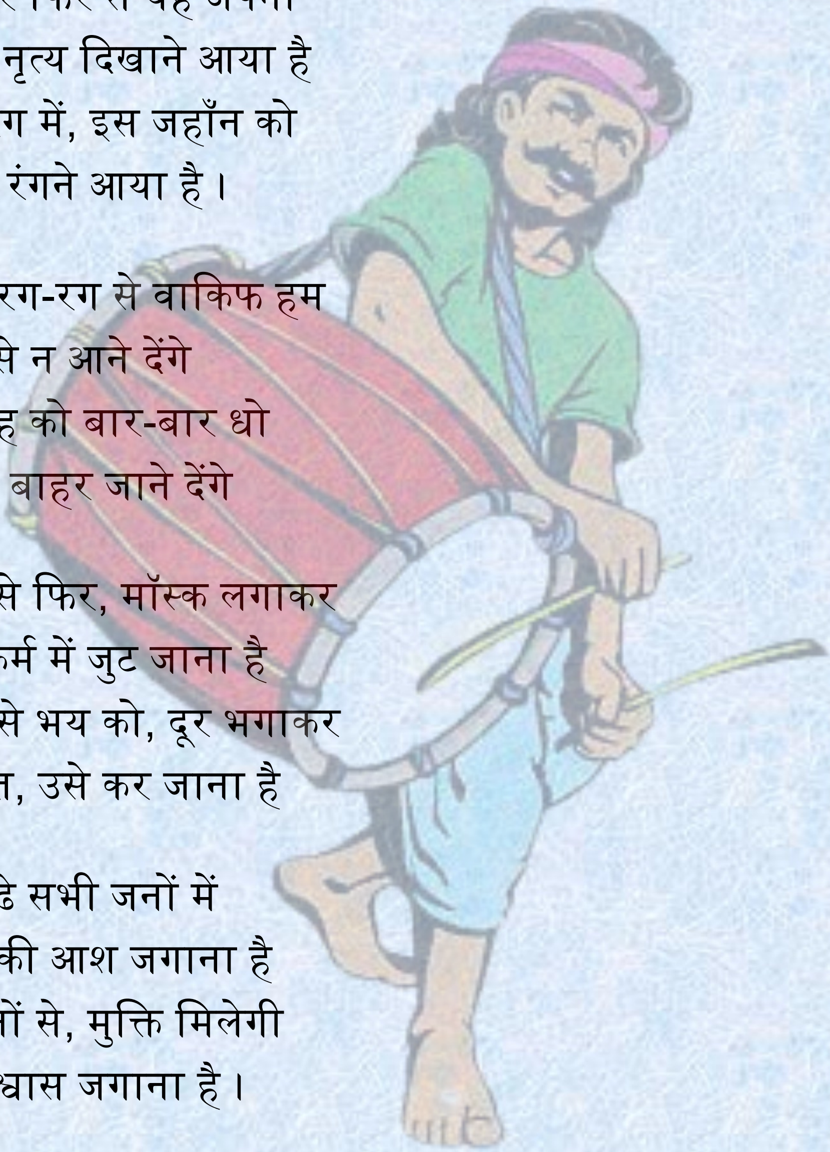

एक बार फिर से यह अपना
तांडव, नृत्य दिखाने आया है
अपने रंग में, इस जहाँन को
फिर से रंगने आया है।

इसकी रग-रग से वाकिफ हम
पास इसे न आने देंगे
हाथ मुँह को बार-बार धो
नाले से बाहर जाने देंगे

वापस से फिर, मॉस्क लगाकर
अपने कर्म में जुट जाना है
जीवन से भय को, दूर भगाकर
भयभीत, उसे कर जाना है

बच्चे, बूढे सभी जनों में
जीवन की आश जगाना है
बुरे दिनों से, मुक्ति मिलेगी
यह विश्वास जगाना है।

आओ हम संकल्पित हो
इस जंग में आगे बढ़ते हैं
दो गज की दूरी के संग हम
विजय का ढोल बजाते हैं
हाँ, विजय का ढोल बजाते हैं।

प्रेमांगन

डॉ. प्रवीण चंद्र बिष्ट

चलो आज जीवन संग हो लें
राग द्वेष से ऊपर उठकर
करें आकलन जीवन भर का
जो अब तक जीया है।

सबसे पहले करें स्मरण
प्यार के, उन दो चार पलों का
याद उन्हें करते ही तन-मन
खिल जाते हैं, कमल दलों सा।

द्वेष बढ़ाते उथल-पुथल हैं
इस पवित्र, तन-मन में
रक्तचाप तो इतना बढ़ता
पहुँचा देता रुग्णालय में।

खाली हाथ चले आए हैं
खाली हाथ चला जाना है
मन मुटाव से ऊपर उठकर
महामानव बन दिखलाना है
महामानव बन दिखलाना है

सुंदर तन-मन, सुंदर जीवन,
आओ ! सुंदरतम इसे बनाते हैं
इसे प्रेम रंगों से भरकर
प्रेमांगन कर जाते हैं।
प्रेमांगन कर जाते हैं।

डिवाइन फैथ फेलोशिप सोसाइटी द्वारा प्रकाशित हिन्दी साहित्य की पत्रिका

उतना ही अधिक डरेगा

डॉ. प्रवीण चंद्र बिष्ट

डरो ! डरो ! डरो !
मित्रों के मिलने से डरो
सगे संबंधियों के आह्वान से डरो
प्रिय जनों के प्यार से डरो
सखियों संग विहार से डरो
समूह के बीच जाने से डरो
भीड का हिस्सा बनने से डरो
इन सबसे तब तक डरो
जब तक वह स्वयं न डरे
जो तुम्हें डराने आया है
तुम जितना अधिक डरोगे
वह भी उतना ही अधिक डरेगा।

प्रार्थना करो, जी हाँ प्रार्थना करो
अपने लिए नहीं,
अपनों के लिए भी नहीं
उनके लिए करो जो प्रात: होते ही
इस दौर में भी मजबूर हैं
घर छोड़ने को
जिन्हें आप नहीं जानते,
जिनको वे नहीं जानते
लेकिन फिर भी कर्मरत संघर्षरत

कोई अस्पताल में जान बचाने में लगा है
तो कोई बेजान हो चुके शरीरों को
ठिकाने लगाने में जी जान से जुटा है
कोई पर्यावरण की स्वच्छता को लेकर
प्रतिबद्ध है
कोई पर्यावरण की स्वच्छता को लेकर
प्रतिबद्ध है
तो कोई मनचलों को समझाने को कटिबद्ध है
कोई मूलभूत आवश्यकताओं को
लोगों तक पहुँचाने के लिए आबद्ध है
प्रार्थना कर सको तो करो
इनकी सुरक्षा के लिए।
इनकी सुरक्षा के लिए।

डॉ. प्रवीण चंद्र बिष्ट

रामनारायण रुइया स्वायत्त महाविद्यालय, माटुंगा, मुंबई के हिन्दी विभागाध्यक्ष हैं। उन्हें मुंबई विश्वविद्यालय, मुंबई ने शोध-निर्देशक के रूप में नियुक्त किया हैं। वे प्रसिद्ध अर्धवार्षिक साहित्यिक जर्नल 'समीचीन', मुंबई (यू. जी. सी. केयर लिस्ट में सम्मिलित) के संयुक्त-संपादक हैं। उनकी पुस्तक शैलेश मटियानी के उपन्यासों का समाजशास्त्रीय अध्ययन, नमन प्रकाशन, दिल्ली (2013) प्रकाशित हो चुकी है। उनके द्वारा कई पुस्तकें सम्पादित की जा चुकी है जिनमें रचनाधर्मी देवेश ठाकुर, नमन प्रकाशन, दिल्ली (2019) व आधुनिक हिन्दी साहित्य की वैचारिक पृष्ठभूमि, नमन प्रकाशन, दिल्ली (2019) प्रमुख हैं। उनके विविध पुस्तकों व पत्र-पत्रिकाओं में लगभग चालीस से अधिक शोध-आलेख प्रकाशित हो चुके हैं।

सम्पर्क- दूरध्वनी: +91-8850569910, अणुमेल: prvinchandra@gmail.com

एक वर्ग

सारिका ठाकुर

पेट में क्षुदा, मन में जीजिविषा लिये..
पलको के नीच झाई, लैम्प में धुंधलाये पन्ने पलटते..
चीथडों को ही ओढ़ कर, जाड़ो में थर्र थर्र कांप रहे..
घसीटता बढ़ रहा देखो एक वर्ग है..
न अंधियारे का भय, न किसी हिंशक पशु का ही..
न भय जल जाने, भींग जाने का ही..
भय बस पीछे रह छूटने का है..
भूख से बिल्लाना, अभागन के भाग फूटने का है..
तभी ढूँढ़ने चला नरक से निकल, धरा पर स्वर्ग है..
घसीटता बढ़ रहा देखो एक वर्ग है..
वह जो नहीं जानता रीति, नीति, तौर तरीके..
सभ्यजनों के मघ्य जीने के सलीके..
फिर भी दाता बन दान को इच्छुक..
दुःख भांप अश्रु पोंछने को तत्पर..
अभाव का भागी, अकेले का सहगामी..
पाताल से खींच जीवन लाने को कर रहा उत्सर्ग है..

घसीटता बढ़ रहा देखो एक वर्ग है.. नियति, नियत, नियमावली
सबका उससे बैर है
कभी धकेलता, तो खींच रहा कोई पैर हैतुम्हारा बेपरवाह अंदाज़
कि वह बना जो, आजीवन वह बना रहे
उन जंजावातों में घुट घुट सना रहे..
जीवित, यथावत, यथानुरुप उसका वर्चस्व है..
घसीटता बढ़ रहा देखो एक वर्ग है..
जो तुम एक हाथ भी बढ़ाते, देते चलने को कांध उसे..
यकीनन दौड़ पड़ता जीवन समर में, करते जो निर्बंध उसे..
पर वह चल रहा, दीर्घ समय लगना है
देर सबेर ही खिलेंगे कुमुदनी, पर युग बदलना है..

सारिका ठाकुर
असिस्टेंट प्रोफ़ेसर
बी. पी. एस. पी बी. एड. महाविद्यालय
दाउदनगर , औरंगाबाद, बिहार
दूरध्वनि- sarikathakur406@gmail.com

डिवाइन फैथ फेलोशिप सोसाइटी द्वारा प्रकाशित हिन्दी साहित्य की पत्रिका

तुम्ही तो थे पिया

कंचन सिंह 'सर्वरी'

झुकी नज़रों की हया में तुम्ही तो थे पिया...
न जानती थी न कभी देखा था तुम्हे, फिर भी चित्र नैनो मैं जो था रोज
उभरता वो तुम्ही तो थे पिया ...!

पायल के शोर मैं चूडियों की खनक में या मेरे ...
झुमके के शोर में तुम्ही तो थे पिया ...
माथे पे सजी मेरी बिंदिया के रंग मैं तुम्हारा ही तो रंग था ...

वो तुम्ही तो थे जो मेरे नम आखो मैं आस भर जाते थे, वो तुम्ही तो थे
जो धीरे छूकर गुजर जाते थे ...

यूँही चलते चलते कभी ठोकर लग जाती थी जब,
अपने स्नेह के फूंक से जो मेरी चोट को सहलाते जो बड़े प्यार से डाटते
हुए कहते पागल संभल के क्यों नहीं चलती?
यह कहने वाले तुम्ही तो थे पिया...
नादान मन और उसमे उभरते नादा सपने भले ही नादा थे पर उस सपने
का आधार तुम्ही तो थे पिया ...

कंचन सिंह 'सर्वरी'

कंचन सिंह कला के क्षेत्र में स्नातकोत्तर हैं और उन्होंने शिक्षा में स्नातकोत्तर किया है। वह मुंबई की निवासी हैं और मूल रूप से अपनी संस्कृति और परंपरा से समृद्ध भूमि, उत्तर प्रदेश से सम्बन्ध रखती हैं। अध्यापन के अतिरिक्त उन्होंने लेखन, नृत्य, गायन और अपना खुद का गीत बनाने में भी हाथ आजमाया है। उनका मानना है कि जीवन तलाशने के लिए बहुत छोटा है, इसलिए आपको खोज करना बंद नहीं करना चाहिए। **सम्पर्क- दूरध्वनि** -9136340363

ईमेल-singh.ckanchan@gmail.com

शमा परवीन

जन्म - 15 अप्रैल (बहराइच, उत्तर प्रदेश) **गुरु** - रश्मि प्रभाकर, पिता- अशफ़ाक अहमद, माता- मुस्तकिमा उर्फ अंजुम फातिमा, पति- मोहम्मद अल्ताफ शिक्षा- एम.ए., एन.टी.टी., डी.एल.एड., बाम्बे आर्ट, डिप्लोमा कम्प्यूटर, पता - बहराइच, उत्तर प्रदेश **सम्प्रति**- अध्यापिका, कवयित्री, लेखिका, भारतीय शिक्षा ट्रस्ट समिति की सदस्य, विभिन्न संस्थाओं के माध्यम से समाज सेवा कार्य में रूचि। प्रकाशित रचनाएँ/ कृति - विभिन्न दैनिक समाचार पत्र पत्रिकाओं में कविता और लघुकथाओं का प्रकाशन। कविता, उपन्यास, कहानी, और नाटक पढ़ने में रूचि ।

कैसे कहूँ तेरे बिन मन ना लगें

शमा परवीन

कैसे कहूँ तेरे बिन मन ना लगें ,
रात तो रात दिन भी दिन ना लगें।

बहकी - बहकी शरारते अनकहीं बातें,
जज़्बात भी अपने बस में ना लगें।

ज़ाहिर कर दो मन की बात ऐसे ,
अल्फाज़ को जंग ना लगें।

आशियाना मुमकिन नहीं,
रहो साथ ऐसे संग ना लगें ।

बेक़रारी में गुज़र गए बहुत दिन ,
तेरे बिन काम में मन ना लगे ।

मत मानो मेरी बातों को,
कहीं आवाज़ तुम्हे धुन ना लगें ।

निकलती हो बेनक़ाब शमा ,
तुम्हे दुनियाँ की नज़र ना लगे ।

अलका 'सोनी'
लेखिका व कवयित्री
बर्नपुर, पश्चिम बंगाल
C-1/4, रोड नम्बर-1,
रिवरसाइड टाऊनशिप
बर्नपुर, आसनसोल।
पश्चिम बंगाल।
पिन-713325.
ई मेल-
alka230414@gmail.com
व्हाट्सएप - 7797390251
सम्पर्क सूत्र - 7908651937

बोलो कैसे बली है मौन

अलका 'सोनी'

डूब रही हैं सम्वेदनाएँ
आक्रांत दिख रही दिशाएं
शब्द खो रहे हैं अर्थ
हो रहा हर ओर अनर्थ
रीति-विधि सब
होते जाते व्यर्थ.....
इनसे अब उबारे कौन
बोलो कैसे बली है मौन

देख कर भी इनको
गर मन न डोले
धमनियों में ठिठुरा हुआ
जो रक्त न खौले
आकर फिर
बंद चक्षुओं को अब
खोले कौन
बोलो कैसे बली है मौन

भूल जाये नदियां कल-कल
मेघ भी जो खो दे गर्जन
क्या हो जो
प्रकृति भी हो जाये मौन
बोलो कैसे बली है मौन??

मजबूरी और मजदूरी

मुकेश कुमार ऋषि वर्मा

वो मजबूर हुआ,
मजदूर बना...
कंधों पर जीवन का बोझ
पुस्तकों का बस्ता दूर हुआ।

गुमनाम अंधेरे में,
एक मुरझाया नन्हा सा फूल
जिन हाथों में कॉपी- कलम होनी थी
वे साफ कर रहे -
ढाबे पर जूठें थाली, प्लेट, गिलास...

जिसे ममता के आंचल में पलना था
वो मोटे सेठ की गाली खाता है।
पेट की खातिर सब सपने चूर हुए
नन्हें हाथों की लकीरें बिलख रहीं...
अपनों के सब साये दूर हुए।

कानून सभी झूठे हैं -
मैंने तो आगरा के न्यायालय परिसर में,
मासूमों को चाय बेचते देखा है
मालिक की गाली खाते देखा है,
भारत के भविष्य को मरते देखा है।

सरकार कोई ऐसी आए,
जो मासूमों की आंखों में चमक लाए
मजबूरी और मजदूरी दोनों को समझे...

मुकेश कुमार ऋषि वर्मा
ग्राम रिहावली, डाकघर
तारौली गुर्जर, फतेहाबाद,
आगरा 283111
ईमेल : -
mukesh123idea@gmail.com

आज भी स्त्री नहीं हुई आज़ाद

चंद्रप्रभा सिंह

उसके पैरों को बांध रखें हैं, इतनी पबंदियो के दीवार
मन की करे अगर, तो खड़े हो जाते उस पर सौ सवाल

आज भी स्त्री नही हुई आज़ाद
जन्म से उसको दिलाया जाता हैं लड़की होने का अहसास
कैसे चलना, खाना व हंसना, सब पहले से तय कर देता हैं ये समाज

आज भी स्त्री नही हुई आज़ाद
उसके सब फैसलों में पुरुष प्रधान ही झलकता है
हर भूमिका में स्त्री को ही झुकते मैंने देखा है

आज भी स्त्री नही हुई आज़ाद
मायके से ससुराल तक ही सीमित है ये स्त्री रेखा
इससे ऊपर उठने की आज भी स्त्रियों को नही दी जाती चेष्ठा

आज भी स्त्री नही हुई आज़ाद
इज्ज़त के नाम पर अभी भी किया जाता है उन्हें कैद
समाज के डर से जकड़ दिया जाते हैं इनके पैर

आज भी स्त्री नही हुई आज़ाद
ऐसी जंजीरों में उसे जकड़े रखा है ये खोखला समाज
इससे बाहर निकलने का वह खुद करेगी प्रयास
तोड़ समाज के जंजीरों को, वो बनेगी लौ से मसाल।

चंद्रप्रभा सिंह
विद्यार्थी, बी. ए., तृतीय वर्ष, हिंदी विभाग
जानकी देवी मेमोरियल महाविद्यालय,
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

www.epradeep.com ई - प्रदीप अंक : 03 वर्ष : 01 जुलाई-सितम्बर 2021

साहित्यिक, सांस्कृतिक एवं सामाजिक ऑनलाइन त्रैमासिक - पत्रिका

कथनी और करनी

जितेन्द्र 'कबीर'

अलार्म घड़ी ने जैसे ही सुबह पांच बजे का अलार्म बजाया, परेश ने आधी नींद में ही घड़ी टटोल कर उसका अलार्म बंद किया। उठ जाऊँ - न उठूँ, इसी उधेड़बुन में पांच- सात मिनट जाया करके आखिर उठने का फैसला किया। रोज की भांति नित्य कर्म, स्नानादि से निवृत्त होकर पूजा के कमरे में जो घुसे तो घंटे भर बाद भगवान से खुशकिस्मती और सलामती का वरदान लेकर ही निकले।

यह केवल आज की बात नहीं, ये रूटीन तो उनका बचपन से ही है, जब माता-पिता के साथ पूजा में बैठा करते थे। बाद में विज्ञान की पढ़ाई की और विज्ञान के अध्यापक बन गये। पढ़ाई बचपन से रूढ़ हो चुके संस्कारों के मुकाबले कमजोर ही सिद्ध हुई, सो उन्होंने भगवान से लेन-देन का सिलसिला कायम रखा। भगवान को दस बीस रुपए की रिश्वत देकर बदले में सुख-समृद्धि जैसी अनमोल नियामतें ले लेना वैसे भी फायदे का काम है।

स्कूल के लिए निकलते हुए रास्ते में जितने भी मंदिर आते हैं, उनके समक्ष हार्न बजाते, पों-पों करते अपनी उपस्थिति दर्ज कराते चलते हैं। स्कूल के गेट के दूसरी तरफ बंधी गाय उनके इंतजार में आंखें बिछाए रहती है, जो रोटी, चने की दाल और गुंथे हुए आटे के बदले ग्रहों की बुरी दृष्टि से इनकी रक्षा करती है। स्कूल में पहुंच कर बच्चों को भगवान का प्रसाद बांटते हैं, तत्पश्चात ही पढ़ाने का काम शुरू होता है।

"विज्ञान वह ज्ञान है जिसे प्रयोगों द्वारा सिद्ध किया जा सकता है और इसे तर्क की कसौटी पर परखा जाता है।"- परिभाषा बताते हुए बच्चों को निर्देश देते हैं कि हमारी पढ़ाई सिर्फ किताबों से रटने तक सीमित नहीं रहनी चाहिए, हमें शिक्षा को अपने जीवन में, अपने दैनिक कार्य- व्यवहार में शामिल करना चाहिए।

इधर बच्चे बेचारे असमंजस में रहते हैं कि उनकी कौन सी बातें अपने जीवन में शामिल करें, वो जो किताब से पढ़ाते हैं या फिर वो जो उनके व्यवहार में दिखाई देती हैं। अब बच्चे तो हमारे घर के भी वो नहीं करते, जो हम करने के उपदेश देते हैं। वे तो वही करते हैं, जो हमें करते हुए देखते हैं फिर चाहे वह मोबाइल चलाना हो या टैलीविजन देखना।

जितेन्द्र 'कबीर'

संप्रति – अध्यापक,

गांव नगोड़ी डाक घर साच तहसील व जिला चम्बा हिमाचल प्रदेश

दूरध्वनि - 7018558314, ईमेल- jitenderkabir880@gmail.com

डिवाइन फैथ फेलोशिप सोसाइटी द्वारा प्रकाशित हिन्दी साहित्य की पत्रिका

चादर: मानवीय सृष्टि की

-वर्तिका राय

दिल्ली का करोलबाग इलाका जहाँ हर रोज़ हजारों बच्चे एक साथ आते हैं पढ़ने के लिए। शाम में बच्चों की कोचिंग छूटी और एक साथ सभी अपने घर के लिए निकले। उन बड़े बड़े बच्चों के भीड़ को हटाते हुए एक छोटी सी बच्ची दौड़ी चली आ रही थी। उसकी आँखों में चंचलपन था और चहरे पर मासूमियत। उसने एक पुरानी सलवार कमीज पहन रखी थी जो उसके लिए बड़ी थी और उसके एक कंधे से नीचे सरक जाती फिर वह उसे खींच कर ऊपर कर लेती। उसके बाल रूखे और बेढ़ंगे से थे मानों हफ्ते हो गए है और उसने कंधी को छूआ तक नहीं है। उसके पैरों में चप्पलें नहीं थीं। वह अपने हाथों में पेन पकड़े हुए थी। करीब 10-15 थीं, अलग-अलग रंग की। कूदते-फागतें, चंचलता से इधर-उधर देखते हुए एक लड़की के पास आ पहुँची और चहककर बोली, "हे एक ठो पेन ले लो"।

उसके अचानक से आ जाने से और झटके से कूदने के कारण लड़की पहले डर जाती है लेकिन उसकी प्यारी आवाज सुन कर हंसी और उससे बोली "नहीं चाहिए"। बच्ची न मानी और फिर बोली "नाहीं ले लो, बस एक ठो ले लो"। इतना बोलने के बाद वह उस लड़की के हाथों को पकड़ कर झूल पड़ी, ठीक वैसे ही जैसे घर का एक छोटा बच्चा अपने बड़े का हाथ पकड़कर, शरारत करते हुए झूलने लगता। लड़की फिर बोली, "अरे बेटा नहीं चाहिए"। उसके बगल में खड़ा एक लड़का उसे देख रहा था।

उसने पूछा, "कितने का है यह पेन"

-"बस 15 रुपए का, लो..ले लो.." और उसने उस लड़के के पॉकेट में पेन डाल दी। लड़का-लड़की दोनों छोटी बच्ची की चंचलता और मासूमियत पर हंसने लगे। लड़के ने अपनी पॉकेट से 15 रुपए निकाले और उसे दिए और थोड़ी सी उसके साथ हंसी ठिठोली करने लगा। लड़के ने उस बच्ची से बातों-बातों में उसका नाम पूछा। उसने धीरे से कहा, "लक्ष्मी (लक्ष्मी)"। उसने जिस मासूमियत और कोमलता से अपना नाम बताया उससे लगता नहीं था कि उसे उस शब्द का अर्थ मालूम था वरना वह खुद के क़िस्मत को कोसने से जरा भी नहीं कतराती। एक पल के लिए उस लड़के की वह दुनिया वही ठहर सी गई। फिर लक्ष्मी वहां से उसी बालपन और चंचलता से कुदती हुई चली गई।

सामने कई लोग खड़े थे जो जिसे लक्ष्मी एक ग्राहक के रुप में देख रही थी जो उसकी कलम खरीदेंगे। एक-एक करके वह सबके पास गई। कोई उसकी चंचलता के लिए उसे प्यार करता तो कोई उसके बेढंगे बालों और कपड़ों की दशा देखकर उसे वहां से डांट कर जाने को बोलता, मानो उन सबकी आंखों के सामने उस बच्ची की चंचलता के ऊपर उसकी दुर्दशा ने चादर ओढ़ ली थी, जिसके पीछे उसका बालपन छुप गया। यूं ही खेलते कूदते वह दो युवकों के पास पहुंची जो सीढियों पर बैठे अपनी पीठ पर बैग टांगे कुछ खा रहे थे। उनमें से एक के पास हेलमेट था। लक्ष्मी उनके पास भी गई और शरारत करने लगी। वह उनके हाथ पर मारते हुए बोली, "लो यह पेन ले लो, केवल 15 रुपए की है बस।"

दोनों युवक हंसने लगे और उसका हाथ पकड़े और अपने पास बुलाया और पूछा, "कहां रहती हो तुम? उम्र क्या है तुम्हारी?" लक्ष्मी ने अपना हाथ छुड़ाया और युवक का हेलमेट उसके हाथों से ले लिया। युवक झटके से उसे सम्भलने को बोला "आराम से।" वह हेलमेट पहले कुछ देर निहारी फिर उसे पहनने लगी। दोनों युवक लक्ष्मी के साथ ठीक वैसे ही शरारत कर रहे थे मानो वह भी बच्चे बन गए हो। लक्ष्मी उनके साथ शरारते करती रही। कभी हेलमेट छीन लेती तो कभी अपने छोटे हाथों से उन लोगों के गालों को खींचती तो कभी उनके ऊपर कूद जाती जैसे वह उन्हें पहले से जानती हो। बात करते-करते लक्ष्मी की नजर एक खिलौने की दुकान पर पड़ी। वह उसे टकटकी लगाए देखती रही। एक तरफ वह उन दोनों युवको से पेन लेने को कहती और वही दूसरी तरफ उसका ध्यान उस दुकान में टंगे हुए खिलौने पर था। वह उन खिलौनों को आशा भरी आंखों से देखती रही मानो वह मन ही मन उन खिलौनों को पाना चाहती थी, उससे खेलना चाहती थी। लगभग 5 मिनट तक उसने खिलौनों को देखा और फिर अपना मन उस खिलौनों की दुनिया से वापस खींच अपनी असल दुनिया में ले आई और अपने वास्तविकता को स्वीकार कर लोगों को घूम-घूम कर पेन बेचने लगी।

वह अपनी उम्र के मुताबिक और भी समझदार बन चुकी थी। शायद उसे मालूम था कि उसे वह खिलौना नहीं मिल सकता या वह उसे नहीं खरीद सकती। शायद वह

अपनी जिम्मेदारियों को इतनी छोटी उम्र में ही समझ चुकी थी और उसे अपने कंधों पर उठाने को तैयार थी या यह कहें कि वह उस जिम्मेदारी को उठा रही थी। यह ज्ञान उसे अपने मां बाप से मिला होगा जो चाहते तो छोटे बच्चों का बहाना कर सड़क के किनारे कटोरा लेकर बैठ जाते और भीख मांग कर अपना गुजारा करते। लेकिन उन्होंने मुफ्त में पैसे पाने से ज्यादा अच्छा मेहनत करके पैसे कमाना समझा। लक्ष्मी घूम-घूम कर चंचलता के साथ पेन बांटती और एक पेन के 15 रूपये कमाती। 'मैं गरीब हूँ यह कह कर किसी को पाप कर्म में लिप्त नहीं होना चाहिए। लक्ष्मी वहां से उसी बालपन के साथ खेलते कूदते चली गई और फिर से उन बड़े बच्चों की भीड़ में गुम हो गई।

वर्तिका राय
विद्यार्थी, बी. ए., द्वितीय वर्ष, हिंदी विभाग
जानकी देवी मेमोरियल महाविद्यालय,
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
ईमेल-raivartika2002@gmail.com

भारतीय शिक्षा पद्धति और हिन्दी सिनेमा

डॉ. सीमा शर्मा

कुंजी शब्द: प्राचीन भारतीय शिक्षा पद्धति, उच्च मानवीय मूल्य, भौतिक और आध्यात्मिक गुण, व्यावसायिक दक्षता, प्राचीन तकनीकी विद्या, भारतीय शिक्षा अधिनियम, कुंठा, आत्महंता प्रवृत्ति, सकारात्मक बदलाव, रंगरेज, डिस्लेक्सिया, Reward and Punishment Theory ।

भारतीय शिक्षा पद्धति में मूल्यपरक शिक्षा पर बल दिया गया है। कागज़ी डिग्री के स्थान पर व्यावहारिक शिक्षा को महत्वपूर्ण माना गया। विवेक शून्य ज्ञान पंचतंत्र की कहानी के उन मित्रों जैसा है, जिन्हें पुनर्जीवित करने की विद्या आती थी पर उस विद्या के प्रयोग का सही विवेक न होने के कारण काल के गाल में समा गए। भारतीय शिक्षा पद्धति में बालक के सर्वांगीण विकास के साथ मानवता, राष्ट्रीय हित और श्रेष्ठ नागरिक बनाने की प्रक्रिया को प्रथम स्थान प्राप्त था। वर्तमान मूल्यहंता परिस्थितियों के दबाव एवं तनाव में स्वार्थी और विखंडित व्यक्तित्व का ही जन्म हो सकता है। हिन्दी सिनेमा पर यदि दृष्टि डाली जाए तो वह एक ओर वर्तमान शिक्षा पद्धति के कटु यथार्थ को दर्शाता है, वहीं वह प्राचीन मूल्यपरक शिक्षा पद्धति का समर्थन करता हुआ दिखाई देता है।

ॐ असतो मा सद्गमय।
तमसो मा ज्योतिर्गमय।
मृत्योर्मामृतं गमय।
-वृहदारण्योपनिषद

अर्थात् मुझे असत्य से सत्य की ओर ले चलो। मुझे अंधकार से प्रकाश की ओर ले चलो। मुझे मृत्यु से अमरता की ओर ले चलो। hi.m.wikipedia.org/w

शिक्षा अनवरत चलने वाली प्रक्रिया है, जो मनुष्य का सर्वांगीण विकास करती है। गौतम बुद्ध के अनुसार- 'जो तर्क नहीं करता, वह धर्मांध है। जो तर्क नहीं कर सकता, वह मूर्ख है। जो तर्क करने का साहस नहीं कर सकता, वो गुलाम है।'

भारत में शिक्षा को अंधकार से प्रकाश की ओर ले जाने वाला मार्ग बताया है। भारतीय मनीषियों ने 'सा विद्या या विमुक्तये' का मार्ग दिखाकर शिक्षा के महत्व को प्रतिपादित किया है। ऐसा ज्ञान जो हमें प्रकाश की ओर ले जाता है। हमें अज्ञान, सांसारिक दुःखों, क्लेशों से मुक्त करता है। हमारे मन के कुविचारों लोभ, मोह, मद, मत्सर आदि से दूर करने की सामर्थ्य रखता है। मनुष्य में भौतिक और आध्यात्मिक गुणों का विकास करता है। उसके भीतर उच्च मानवीय मूल्यों की सुदृढ़ नींव रखता है। प्राचीन भारतीय शिक्षा पद्धति में शिक्षा ग्रहण की प्रक्रिया में मानवता को प्राथमिकता दी जाती थी, व्यावसायिक भावना को द्वितीय स्थान प्राप्त था। उस प्रक्रिया में अंधलिप्सा नहीं थी, दूसरों को पददलित करके स्वयं का उत्थान करने की कुंठा नहीं थी। मानसिक तनाव और दबाव की भावना भी नहीं थी। यह एक ऐसी शिक्षा थी, जो बालक का सहजता के साथ ज्ञानवर्धन करती है। यह शिक्षा उम्र के उत्थान के साथ-साथ नयी समझ, संवेदना और मानवता की भावना और व्यावसायिक दक्षता पर बल देती थी। इस व्यावसायिक दक्षता में छात्र की रूचि और रूझान पर विशेष बल दिया जाता था।

भारत की प्राचीन शिक्षा पद्धति में गुरूकुल की परम्परा रही है। गुरूकुल में राजा की संतान और आम प्रजा की संतान सभी के साथ समान व्यवहार किया जाता था। उन्हें प्रतिदिन के कार्य आवंटित किए जाते थे, जिसमें सभी आश्रम वासियों के भोजन के लिए लकड़ियां चुनना, भिक्षा मांगना, आश्रम के आस-पास पौधों को सींचना, आश्रम में पशु-पक्षियों की देखभाल और संरक्षण प्रदान करना आदि अनेक छोटे-बड़े कार्य नियमानुसार छात्रों को आवंटित किए जाते थे, ताकि उनमें यह समझ विकसित हो सके कि कोई भी कार्य छोटा या बड़ा नहीं है। उन सभी कार्यों में दैनिंदिन में प्रयोग होने वाले सभी कार्यों की समझ विकसित करना आवश्यक अंग था। इस प्रकार शिक्षित छात्र जीवन के उतार-चढ़ाव, सुख-दुख में समभाव से जीवन यापन कर लेता था। साथ ही, छात्रों में

उनकी प्रतिभा के अनुसार रूचि जागृत की जाती थी। छात्रों में भावी जीवन के व्यवसाय की समझ, रूझान और चयन के विवेक का परिष्कार किया जाता था। उसके पश्चात् उसी के अनुरूप छात्र को व्यवसायिक शिक्षा दी जाती थी। आर्यावर्त के गुरूकुल में जिन विद्याओं का ज्ञान दिया जाता था, वे थीं :

1. अग्नि विद्या (Metallurgy)
2. वायु विद्या(Flight)
3. जल विद्या(Navigation)
4. अंतरिक्ष विद्या(Space Science)
5. पृथ्वी विद्या(Environment Science)
6. सूर्य विद्या(Solar Study)
7. चंद्र व लोक विद्या(Lunar Study)
8. मेघ विद्या(Weather Forecast)
9. पदार्थ विद्युत् विद्या
10. सौर ऊर्जा विद्या(Solar Energy)
11. दिन रात्रि विद्या
12. सृष्टि विद्या(Space Research)
13. खगोल विद्या(Astronomy)
14. भूगोल विद्या(Geography)
15. काल विद्या(Time)
16. भूगर्भ विद्या(Geology Mining)
17. रत्न व धातु विद्या(Gems and Metals)
18. आकर्षण विद्या(Gravity)
19. प्रकाश विद्या(Solar energy)
20. तार विद्या(Communication)
21. विमान विद्या(Plane Designing)

22. जलयान विद्या (Water Vessels)
23. अग्नेय अस्त्र विद्या (Arms and Ammunition)
24. जीव जंतु विज्ञान विद्या(Zoology Botany)
25. यज्ञ विद्या(Material Science)

इसके साथ ही व्यावसायिक और तकनीकी विद्या की शिक्षा भी दी जाती थी:

26. वाणिज्य(Commerce)
27. कृषि(Agriculture)
28. पशुपालन(Animal Husbandry)
29. पक्षिपालन(Bird Keeping)
30. पशु प्रशिक्षण (Animal Training)
31. यान यंत्रकार(Mechanics)
32. रथकार(Vehicle Designing)
33. रत्नकार(Gems)
34. सुवर्णकार(Jewellery Designing)
35. वस्त्रकार(Textile)
36. कुम्भकार(Pottery Designing)
37. लोहकार(Metallurgy)
38. नापित(Paramedical)
39. रंगसाज(Dying)
40. वनपाल(Horticulture)
41. रज्जुकर(Logistics)
42. वास्तुकार(Architect)
43. पाक विद्या(Cooking)
44. सारथ्य(Driving)

45. नदी प्रबन्धक(Water Management)
46. सूचिकार(Data Entry)
47. गोशाला प्रबन्धक(Animal Husbandry)
48. उद्यानपाल (Horticulture)

आदि। (डाटा व्हाट्सऐप पोस्ट से साभार)।

रामायण में वर्णित है कि विश्वामित्र राम के गुरु थे। उनके आश्रम में राजा और प्रजा दोनों की संतान समान भाव से शिक्षा पाती थी। उन्होंने राम को शस्त्र और शास्त्र की की विद्या दी। उन्हें हर कार्य में दक्ष बनाया। विश्वामित्र के आश्रम में राम शस्त्र ज्ञान और राजनीति के साथ-साथ योग, धर्म, अध्यात्म आदि की शिक्षा में भी पारंगत हुए। यह विश्वामित्र की शिक्षा का ही संस्कार था कि राम के लिए शासक बनना और चौदह वर्ष के लिए वनगमन करना समान था। वन में उनका अहंकार रहित समान व्यवहार, पशु-पक्षियों के प्रति दयाभाव, वन में कुशल प्रबंधन, कुटिया का निर्माण, अभाव में रहते हुए भोजन की व्यवस्था करना और रावण जैसे वैभवशाली क्रूर शासक को दंडित करने के लिए सैन्य प्रबंधन इत्यादि कार्यों का बीजवपन विश्वामित्र की आम व्यवस्था में ही हो गया था। राम ने ईश्वर होते हुए भी एक सामान्य मनुष्य की भांति सर्वगुण सम्पन्न छात्र का आदर्श हम सभी के समक्ष रखा। उन्होंने सभी के समक्ष एक उदाहरण प्रस्तुत किया कि जितना कठिन संघर्ष होगा, विजय उतनी ही महान होगी। उन्होंने अपने आदर्श और मूल्यों से कुशल प्रबंधन, सर्वप्रिय, एकनिष्ठता, दृढ़ संकल्प, सत्य पर अडिग रहना आदि अनेक कीर्तिमान स्थापित किये।

गुरु संदीपनी के आम में शिक्षा ग्रहण करने वाले कृष्ण राजपुत्र हैं और सुदामा निर्धन ब्राह्मण पुत्र हैं। उनकी मित्रता जगत प्रसिद्ध है। अध्ययन और आश्रम प्रबंधन के कार्य साथ -साथ समान भाव से करते थे।

इस प्रकार गुरुकुल परंपरा में छात्र को विवेकाधिकार और आत्मसंयम, चारित्रिक गुणवत्ता, मित्रता और सामाजिक सहभागिता, छात्र का (व्यक्तित्व और बौद्धिक) समग्र

विकास, आध्यात्मिक विकास, सामाजिक उत्थान, दया व करूणा की भावना विकसित करना, ज्ञान और संस्कृति का संरक्षण इत्यादि बातों पर बल दिया जाता था। इस तरह एक ऐसी सुदृढ़ पीढ़ी तैयार की जाती थी जो सशक्त राष्ट्र के निर्माण ,उच्च मानवीय एवं सामाजिक मूल्यों की स्थापना में महत्वपूर्ण योगदान देती थी।

गुरु द्रोणाचार्य ने अन्याय और अनीति की परंपरा की नींव रखी। उन्होंने अपनी महत्त्वाकांक्षा और कुंठा की पूर्ति के लिए दुराग्रह पूर्ण हठ ठान लिया कि वे केवल क्षत्रिय पुत्र को ही शिक्षा देंगे। इस कुंठा में उन्होंने कर्ण जैसे प्रतिभाशाली छात्र को सूत पुत्र कह कर नकारा और एकलव्य जैसे छात्र का गुरु दक्षिणा में अंगूठा ही मांग लिया। इस प्रकार एक प्रतिभाशाली छात्र का भविष्य आरम्भ होने के साथ ही समाप्त हो गया। इस अन्याय और अनीति का जो बीजवपन हुआ था उसका परिणाम भी सभी के समक्ष था। गुरु द्रोणाचार्य का अंत भी उसी अन्याय और अनीति से हुआ। द्रोणाचार्य ने शिक्षा दान में जातिगत दुराग्रह रखा था लेकिन कौरव और पांडव की शिक्षा में चयन का अधिकार उनकी रूचि और योग्यता के अनुरूप उन्हीं को दिया था। जैसे अर्जुन ने धनुष-बाण, भीम और दुर्योधन ने गदा युद्ध में महारत हासिल की।

पंचतंत्र के प्रणेता विष्णु शर्मा गुप्त काल के महान आचार्य थे। ऐसी मान्यता है कि अमरकीर्ति नामक राजा के मूर्ख और उद्दंड पुत्रों को शिक्षित करने के लिए पंचतंत्र नामक ग्रंथ की रचना की। उन्होंने प्रकृति और पशु-पक्षियों के प्रेरक प्रसंग और सूक्ष्म व्यवहार के माध्यम से व्यावहारिक तथा रूचिकर शिक्षा की नींव रखी। यह वह शिक्षा पद्धति थी जो किसी प्रकार का दबाव, तनाव छात्रों पर नहीं डालती बल्कि खेल-खेल में सहज भाव से शिक्षित करती जाती है।

छात्र के सर्वांगीण विकास और कुशल नागरिक बनने की प्रक्रिया में गुरू बहुत महत्वपूर्ण कड़ी है। इसलिए भारतीय चिंतन में गुरु के आकाशधर्मा होने की अनिवार्यता पर बल दिया गया, यानी जिस प्रकार आकाश अपने तले रहने वाले पौधों व प्राणी को समान भाव से पनपने, फलने-फूलने का अवसर प्रदान करता है उसी प्रकार गुरु भी अपने छात्र को

उनकी अभिरूचि के अनुरूप शिक्षा ग्रहण करने का अवसर प्रदान करता है। इसलिए कबीर ने गुरू को ईश्वर से भी श्रेष्ठ स्थान दिया है क्योंकि ईश्वर का साक्षात्कार कराने का मार्ग गुरु ही दिखाता है:

'गुरु गोविंद दोऊ खड़े काके लागूं पाय।
बलिहारी गुरु आपने गोविंद दियो बताय।।'
तथा
कबीरा ते नर अंध हैं, गुरु को कहते और।
हरि के रूठे ठौर है, गुरु रूठे नहीं ठौर।। bhaktimaal.com

शिष्य को भी गुरु बनाते समय विवेकपूर्ण जांच-परख की आवश्यकता पर बल दिया :

'जाका गुरु भी अँधला, चेला खरा निरंध।
अंधहि अंधा ठेलिया, दोनों कूप परंत।।
कबीर, bharatdiscovery.org

शिक्षा की प्रक्रिया में इस आवश्यकता पर बल दिया गया कि सर्वप्रथम छात्र एक बेहतरीन मनुष्य बने अन्यथा मोटी-मोटी पोथी से प्राप्त किया गया ज्ञान व्यर्थ है। वह मनुष्य को मात्र अहंकारी बनाता है।

'पोथी पढि पढि जग मुआ, पंडित भया न कोय।
ढाई आखर प्रेम का पढ़े सो पंडित होय।।

यानी मोटी-मोटी पोथी पढ़ कर, बड़ी-बडी डिग्री लेने मात्र से कोई व्यक्ति विद्वान नहीं बनता है। जब तक मनुष्य में मानवीय गुण, मानवता की भावना, सभ्य एवं कुशल नागरिक बनने के गुण नहीं आये तो उसकी शिक्षा व्यर्थ है और ऐसा व्यक्ति अशिक्षित से भी गया-बीता है।

सन् 1858 में भारत शिक्षा अधिनियम (Indian Education Act) बनाया गया। यूनाइटेड किंगडम की संसद द्वारा यह अधिनियम पारित किया गया था। इसकी परिकल्पना लॉर्ड मैकाले ने तैयार की थी। मैकाले का स्पष्ट कहना था कि 'भारत को हमेश-हमेशा के लिए अगर गुलाम बनाना है तो इसकी देशी और सांस्कृतिक शिक्षा व्यवस्था को पूरी तरह से ध्वस्त करना होगा और उसकी जगह अंग्रेजी शिक्षा व्यवस्था लानी होगी और तभी इस देश में शरीर से हिन्दुस्तानी, लेकिन दिमाग से अंग्रेज पैदा होंगे, और जब वे इस देश की यूनिवर्सिटी से निकलेंगे तो हमारे हित में ही काम करेंगे, और इस दौरान मैकाले ने एक मुहावरा इस्तेमाल करते हुए कहा था कि, 'जैसे किसी खेत में कोई फसल लगाने से पहले पूरी तरह जोत दिया जाता है वैसे ही इस भारत को जोतना होगा और अंग्रेजी शिक्षा व्यवस्था लानी होगी।" सूर्य नारायण चतुर्वेदी (kreately.in)

इस प्रकार भारत में जिस आदर्श शिक्षा पद्धति का कीर्तिमान गढ़ा गया, उसे आधुनिक युग में विस्मृत कर दिया गया। अब शिक्षा का उद्देश्य अधिकाधिक पैसा कमाना, अच्छा पद पाने की लिप्सा (उसके लिए चाहे जो मूल्य चुकाना पड़े) आदि रह गया। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए साधनों की पवित्रता को ताक पर रख दिया गया। आज के समय में सफलता पाने के लिए दूसरों को नीचा दिखाना, दूसरों का पद और छवि गिरा कर अपना उत्थान करने का कुत्सित प्रयास करना, किसी भी माध्यम या स्तर पर जाकर स्वयं को श्रेष्ठ सिद्ध करने का कुचक्र रचना आदि सफलता का पर्याय माना जाने लगा। जो छात्र इस प्रकार के मार्ग पर नहीं चल पाते उनमें कुंठा और आत्महंता प्रवृत्ति पनपने लगी। यह कैसी शिक्षा परम्परा विकसित हो चली थी जो चारित्रिक पतन, व्यक्तित्व के विघटन, मानसिक तनाव और कुंठाओं की जननी बन गयी। कबीर ने जिससे आगाह किया था अंधा (ज्ञानरहित) गुरु अंधी (ज्ञानरहित) शिष्य परम्परा को ही जन्म देगा। आज वही चरितार्थ होता हुआ प्रतीत होता है। आज का अवसरवादी, पद लोलुप, धन लोलुप, अमानवीय, मूल्यों का क्षरण करके अपना उत्थान करने वाला गुरू स्वयं के जैसी शिष्य परम्परा का जनक बन गया है। बड़ी स्वाभाविक सी बात है कि इस प्रक्रिया में मानवीय-सामाजिक मूल्यों और आदर्शों का बड़ी तेजी से क्षरण हुआ है।

हिन्दी सिनेमा पर यदि दृष्टिपात किया जाए तो भारतीय शिक्षा पद्धति के विभिन्न रुपों और विचारों के दर्शन मिलते हैं:

परिचय (1972): गुलज़ार द्वारा निर्देशित,1972, में बनी फिल्म 'परिचय' फिल्म का नायक रवि बेरोजगार है। अपने मामा के साथ रवि राय साहब की हवेली में पहुंचता है। राय साहब के पांच पोते- पोती हैं जो बहुत ही नटखट हैं। अपने माता-पिता की आकस्मिक मृत्यु के पश्चात् उनमें प्रेम की ऊष्मा का अभाव है इसलिए उन्हें पढ़ाने के लिए जो भी शिक्षक आता है, वे उसे अपनी उद्दंडता और शरारत से भगा देते हैं। बड़ी हवेली के भीतर वे लगातार दंडित होते रहते हैं। उनकी अपूर्ण भावनात्मक इच्छाऔर बुआ द्वारा दिये गये कठोर दंड उनमें शिक्षा के प्रति अरूचि और शिक्षक के प्रति अवज्ञा का भाव उत्पन्न कर देता है। परिचय फिल्म यह सामाजिक संदेश देती है कि प्रत्येक छात्र और उसकी परिस्थिति समान नहीं होती। छात्र की परिस्थिति, योग्यता और भावनात्मक स्थिति को समझ कर ही उचित शिक्षा दी जा सकती है। जैसा कि फिल्म का नायक रवि उन छात्रों की परिस्थिति, भावनात्मक आवश्यकता और योग्यता को समझकर उन्हें शिक्षा देने में सफल हो जाता है। फिल्म का एक दृश्य है:

बच्चे: अभी तो हमने कुछ किया ही नहीं है कि आप हमें मार रहे हैं..

राय साहब: बच्चे अगर गुंडे हों तो...

रवि: बच्चे गुंडे नहीं होते राय साहब! शरारती हो सकते हैं, बदमाश हो सकते हैं।

राय साहब: इससे बड़ा और कोई अहसान मुझ पर नहीं होगा अगर तुम इन बच्चों को इंसान बना सको।

रवि: राय साहब मैं अपनी पूरी कोशिश करूंगा इन्हें पढ़ाने की, समझाने की। बच्चे समझदार लगते हैं, जहीन लगते हैं। सिर्फ ये है कि ज़िद्दी हैं। कहीं यही ज़िद अगर सही रास्ते पर आ गई तो कल इन बच्चों पर आपसे ज्यादा फक्र करने वाला कोई नहीं होगा।'

परिचय फिल्म (यू ट्यूब)

यह सकारात्मक सोच ही एक शिक्षक को शिक्षक बनाता है।

जो जीता वही सिकंदर (1992): मंसूर खान के निर्देशन में बनी यह फिल्म मैराथन साइकिलिंग रेस पर आधारित है। फिल्म के कथानक में राजपूत कॉलेज के छात्र जो समृद्ध पृष्ठभूमि और मॉडल कॉलेज के छात्र , जो गरीब स्थानीय परिवार के छात्र हैं। फिल्म यह संदेश देती है कि अभावग्रस्त और गरीब तबके का छात्र यदि लगनशील है तो वह अपने परिश्रम और धैर्य से साधन सम्पन्न वर्ग को भी पराजित कर सकता है। शिक्षा धन की मोहताज नहीं है। साधन सम्पन्न वर्ग अपने अहंकार में अपने लक्ष्य तक नहीं पहुंच पाता, वह पैसे के दम पर कुछ कागज़ी डिग्री तो हासिल कर सकता है पर प्रतिभा अर्जित नहीं कर सकता। प्रतिभा तो व्यक्ति की अपनी लग्नशीलता और धैर्य से आती है। यह फिल्म पंचतंत्र की प्रसिद्ध कहानी कछुआ और खरगोश की रेस की याद दिलाती है। जहाँ कछुआ अपनी लगनशीलता से सारी बाधाओं को पार करता है और विजयी होता है। मजरूह सुल्तानपुरी का लिखा यह गीत बहुत प्रसिद्ध हुआ :

'वो सिकन्दर ही दोस्तों कहलाता है।
हारी बाजी को जीतना जिसे आता है।
निकलेंगे मैदान में जिस दिन हम झूमते।
धरती डोलेगी ये कदम चूमके ।

Lyrics india.net

रंग दे बसंती (2006): 'रंग दे बसंती 'फिल्म आजादी के संघर्ष और वर्तमान परिस्थितियों में उसकी प्रासंगिकता की बात करती है। दिल्ली विश्वविद्यालय के पूर्व छात्र अपनी पढ़ाई पूरी करने के बाद उद्देश्य हीन, मौज-मस्ती में जीवन-यापन कर रहे हैं। देशभक्ति, समाज के लिए कुछ कर गुजरने का जुनून उनके लिए महज किताबी बातें हैं। फिल्म में दिखाया गया है कि एक ब्रिटिश डॉक्यूमेंट्री फिल्म निर्माता सू भारत आती है जो भारत के स्वतंत्रता सेनानियों पर डॉक्यूमेंट्री बना रही है। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए वह उन छात्रों से मिलती है। सू के संपर्क में आने के पश्चात् इन उद्देश्यहीन युवाओं को एक दिशा मिलती है और उन्हें लगता है कि आज भी वे परिस्थितियां विद्यमान हैं

जो भगतसिंह और चंद्रशेखर आजाद जैसे क्रांतिकारियों के समक्ष थीं, जिसके लिए उन्होंने अपने प्राण भी न्यौछावर कर दिए। आज उस समाज में एक बार फिर उसी जुनून के साथ सकारात्मक बदलाव लाने की आवश्यकता है।फिल्म का यह प्रभाव हुआ कि 'लोगों ने प्रियदर्शिनी मट्टू और जेसिका लाल के केसों में अदालत के खिलाफ मोर्चा निकाला और स्वतंत्र भारत के इतिहास में पहली बार इस तरह के प्रिय जुलूस निकाल के उच्च न्यायालय को और सरकार को ये मुकदमे फिर से खोलने पर मजबूर कर दिया।'

hi.m.wikipedia.org

यह फिल्म रक्षा सेवा और मंत्रालय में व्याप्त भ्रष्टाचार की ओर भी संकेत करती है। 'रंग दे बसंती' फिल्म शिक्षा की प्रक्रिया और उसकी उपयोगिता की ओर भी प्रश्न खड़ा करती है। आज की शिक्षा उद्देश्यहीन बेरोजगारों की भीड़ खड़ी कर रही है या क्रांतिचेता समाज के सकारात्मक बदलाव के इच्छुक जागरूक एवं जिम्मेदार नागरिक तैयार कर रही है।

फिल्म का यह गीत बहुत लोकप्रिय हुआ:

मोहे तू रंग दे बसंती
बस्ती रंग दे, हस्ती रंग दे
हँस हँस रंग दे, नस नस रंग दे
बचपन रंग दे, जोबन रंग दे
रंगरेज मेरे सब कुछ रंग दे।

शिक्षा भी रंगरेज की भूमिका में होता है जो छात्र के स्वच्छ मानस पटल पर विभिन्न सकारात्मक रंग भरता है।

तारे जमीं पर (2007): आमिर खान के सफल निर्देशन में बनी यह फिल्म अध्यापक निकुंभ और डिस्लेक्सिया से पीड़ित छात्र ईशान अवस्थी के गुरु-शिष्य संबंधों की ओर संकेत करती है। बच्चों का मानस पटल एकदम स्वच्छ होता है।

परिवार उनके बौद्धिक स्तर और भावनात्मक लगाव को समझे बिना ही उन पर कड़े अनुशासन और इच्छाओं का अनावश्यक दबाव बनाता है। बालक की शिक्षा परिवार से ही आरम्भ होती है। अक्सर माता-पिता अपनी अधूरी अतृप्त महत्वाकांक्षाओं का बोझ बच्चों के मासूम कंधे पर लाद देते हैं। परिवार के अन्य सदस्य, पडौसी या रिश्तेदार से तुलना करना, ताने कसना, समय-समय पर उनका अपमान इत्यादि करते हैं।

परिवार के ऐसे व्यवहार के नीचे दबकर मासूम बचपन कुंठित हो जाता है। परिवार का उत्साहवर्धक और सकारात्मक व्यवहार न पाकर उसके सीखने की प्रक्रिया धीमी हो जाती है। जब जीवन में निकुंभ जैसा अध्यापक आता है तो वह छात्र को एक नयी दिशा देता है। वह समाज के सम्मुख यह उदाहरण प्रस्तुत करता है कि प्रत्येक छात्र की समझ, सीखने की प्रक्रिया और अभिरुचि भिन्न होती है। परिवार और शिक्षक दोनों मिलकर जब इस तथ्य को समझ लेंगे तब हम एक सुदृढ़ पीढ़ी तैयार कर सकेंगे। 'तारे ज़मीं पर' फिल्म यह सवाल खड़े करती है:

"अनुशासन और नियम का डंडा दिखलाकर बच्चों को डराने वाले शिक्षक अपनी जिंदगी में कितने अनुशासित हैं? वे कितने नियमों का पालन करते हैं? क्या सभी बच्चों को भेड़ की तरह एक ही डंडे से हांका जाना चाहिए?' m.hindi.webdunia.com

फिल्म का महत्वपूर्ण संवाद है:

'बाहर एक बेरहम कॉम्पीटीटिव दुनिया बसी है.. और इस दुनिया में सभी को अपने-अपने घरों में टॉपर्स और रैंकर्स उगाने हैं।

अपनी एम्बीशिएंस का वजन अपने बच्चों के नाज़ुक कंधों पे डालना...It's worse than child labour.' (scroll droll.com)

निकुंभ इस दिशा में यह संकेत करता है कि यदि किसी पेड़ से लगातार नकारात्मक बातें की जाती हैं तो वह सूख जाता है। बच्चे की भी वही स्थिति है। शिक्षा में पुरस्कार और सजा सिद्धांत (Reward and Punishment Theory) का विवेक आवश्यक है।

थ्री इडियट्स (2009):

राजकुमार हिरानी के निर्देशन में बनी फिल्म 'थ्री इडियट्स' शिक्षा जगत् की खामियों को उजागर करती है। वर्तमान शिक्षा प्रणाली डॉक्टर और इंजिनियर की भीड़ तो इकट्ठा कर रही है। पारिवारिक महत्वाकांक्षा की पूर्ति के लिए उद्देश्यहीन, लक्ष्यहीन और पथभ्रष्ट पीढ़ी तैयार कर रही है। जैसे महत्वाकांक्षांओं और कुंठाओं की एक अंधी दौड़ है, जिसमें दौड़ने वाले को यह ही नहीं पता है कि उसे जाना कहां है:

'Life is a race if You don't run fast You will be like a broken un-daa....' (You Tube)

इस प्रसंग में कबीर की कही हुई बात याद आती है, जिसका उल्लेख इस लेख के पूर्व में भी हुआ है , जिसका गुरु अंधा (ज्ञानहीन, पथभ्रष्ट) है और शिष्य मूर्ख (विवेकशून्य) है, तो दोनों अंधकार के गर्त में गिरते हैं। विवेकशून्य रटन्त विद्या का अंततः पतन होना निश्चित है:

फिल्म में ओमी वैद्य का संवाद इसी ओर इंगित करता है:

'पिछले बत्तीस साल से इन्होंने इस कॉलेज में बलात्कार पे बलात्कार किये...स्तन होता सभी के पास है.. सब छुपा के रखते हैं..देता कोई नहीं।' (You Tube)

यह विवेकशून्य रट्टू पीढ़ी का कटु सत्य है जो रटकर बड़ी-बडी डिग्री तो पा जाते हैं पर व्यावहारिक शिक्षा से वह कोसों दूर रहते हैं ।

यह वर्तमान शिक्षा प्रणाली की खामियां हैं कि वह व्यावहारिक शिक्षा और मनोयोग से कार्य करने वाली पीढ़ी तैयार नहीं कर पा रही है।

फिल्म का नायक रैंचो (रणछोड़ दास श्यामलदास चांचड) कहता है :

' कामयाब होने के लिए नहीं काबिल होने के लिए पढ़ो।... मैं तो आपको

ये पढा रहा था कि पढ़ते कैसे हैं... सक्सेस के पीछे मत भागो, एक्सीलेंस का पीछा करो, सक्सेस झक मार के तुम्हारे पास आयेगी।' (You Tube)

'थ्री इडियटस' फिल्म का यह गीत बहुत ही संवेदनशीलता के साथ शिक्षा व्यवस्था की आँखें खोलता है:

'सारी उम्र हम मर-मर के जी लिये
इक पल तो अब हमें जीने दो जीने दो
Give me some Sunshine...
Give me some rain..
Give me another change
I wannaa grow up once again. (Hindi tracks.in)

पाठशाला (2010): मिलिंद उके द्वारा निर्देशित यह फिल्म विद्यालय परिसर में शिक्षक, प्रबंधक और छात्रों के चारों ओर घूमती है। यह वर्तमान शिक्षा प्रणाली और उसकी खामियों को दर्शाती है। विद्यालय प्रबंधकों के अत्याचार के खिलाफ कहानी का नायक राहुल उदयवार अन्य शिक्षकों को एकजुट करता है। प्रिंसिपल आदित्य सहाय अपने निहित स्वार्थों की सिद्धि के लिए प्रबंधन के क्रूर फैसले का बचाव करता है।

यह शिक्षा जगत् के लिए त्रासदीय स्थिति है जब 32 वर्ष से विद्यालय के लिए एकनिष्ठ समर्पित शिक्षक, सहाय को इस्तीफा देने के लिए विवश हो जाता है। व्यावसायीकरण की अंध-लिप्सा में विद्यालय के लिए नये कीर्तिमान गढ़ने वाला शिक्षक उपेक्षित हो जाता है और चंद मुट्ठी भर स्वार्थी तत्व अपने निजी स्वार्थों के लिए विद्यालय के हितों के साथ खिलवाड़ करते हैं। फिल्म का यह संवाद इसी को मार्मिकता के साथ उभारता है:

'आपकी उम्र और आपके तजुर्बे से आपका रूतबा कहीं बढ़कर है।' (You Tube)

FALTU(2011): रेमो डिसूजा द्वारा निर्देशित इस फिल्म में शिक्षा पद्धति, परिवार की महत्वाकांक्षा से उत्पन्न दबाव, कम अंक लाने का तनाव आदि दर्शाया गया है। 35 से 70 अंक लाने वाले ऐसे कई छात्र हैं, जिन्हें प्रतिष्ठित कॉलेज में एडमिशन नहीं मिल पाता। ऐसे छात्रों के हाथ निराशा ही हाथ लगती है। इसलिए फिल्म यह संदेश देती है कि अपनी रूचि के क्षेत्र को ही अपना व्यवसाय बनाना चाहिए।

फिल्म का यह गीत छात्र की त्रासदी दर्शाता है :

'पास होके भी मैं फेल हो गया
सारा जहाँ जैसे जेल हो गया
अब मैं जाऊँ कहां, जाऊँ कहां
मुँह दिखाऊं कहाँ, मुँह दिखाऊं कहाँ
It makes me lie mere percentage
It makes me cry mere percantage.'

hindilyrics.net

आरक्षण (2011): प्रकाश झा द्वारा निर्देशित फिल्म "आरक्षण' वर्तमान शिक्षा प्रणाली की खामियों को दर्शाती है। इस फिल्म में दर्शाया गया है कि प्रतिष्ठित शिक्षण संस्थान में प्रतिभाशाली अभ्यर्थी को इसलिए अस्वीकार कर दिया जाता है क्योंकि वह पिछडी जाति का है। लेकिन जब सुप्रीम कोर्ट ओबीसी को आरक्षण दे देता है तो एस टी एम विद्यालय में खुशियाँ मनायी जाती हैं। पिछडी जाति आरक्षण पर खुशी मनाती है क्योंकि उनके लिए यह अतिरिक्त अवसर प्रदान कर है और समाज का उच्च तबका आरक्षण का विरोध करता है क्योंकि उसे संविधान द्वारा निर्धारित आरक्षण सिस्टम को प्रभावी ढंग से लागू किए जाने पर संदेह है। विद्यालय प्रबंधन को लगता है कि आरक्षण प्रणाली छात्रों में टकराव उत्पन्न करेगी।"

'फिल्म के एक दृश्य में यह कहते हुए दिखाया गया है कि आरक्षण हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है तो इसके उत्तर में कहा जाता है कि आरक्षण तो खैरात में मिला है।'

m.jagran.com

फिल्म का यह गीत आरक्षण का समर्थन करता है:

'जरा पंखा तो खोल दो
फिर आसमान देखना
एक मौका तो दे दो
फिर उडान देखना (You Tube)

Chalk n Duster: जयंत गिलटर द्वारा निर्देशित इस फिल्म में मुंबई के कांता बेन हाई स्कूल की कहानी दिखाई गई है। फिल्म में दर्शाया गया है कि विद्यालय के मुख्य प्रबंधक अनमोल पारिक उसे शहर का नंबर वन स्कूल बनाना चाहते हैं ताकि धनी वर्ग के बच्चे भी उसमें पढ़ने आयें। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए वह अनुभवी और योग्य प्रिंसिपल भारती शर्मा को बर्खास्त करके यंग वाइस प्रिंसिपल कामिनी गुप्ता को प्रिंसिपल बनाता है। कामिनी निष्ठावान अनुभवी अध्यापकों को प्रताड़ित करने में लग जाती है। विद्यालय की मैथ्य टीचर विद्या सावंत और साइंस टीचर ज्योति प्रिंसिपल की तानाशाही और योग्य टीचर्स का हैरसमैंट करने की नीतियों का विरोध करती हैं। इस कारण कामिनी सर्वप्रथम विद्या को अयोग्य सिद्ध करके बर्खास्त कर देती है। ऐसे में ज्योति एक टीवी चैनल की रिपोर्टर भैरवी ठक्कर की सहायता से टीचर्स के सम्मान और विद्या के हक की लड़ाई लडती है। फिल्म का यह संवाद बहुत ही मार्मिक है:

'जैसे स्टूडेंट्स को टीचर के ज्ञान की जरूरत है, उसी तरह टीचर्स को स्टूडेंट्स के प्यार और सम्मान की जरूरत है।'

इस क्रम में कुछ और महत्वपूर्ण फिल्में भी आयीं, वे हैं- गुरु (2007), चल चलें (2009), आई एम कलाम (2010), हिन्दी मीडियम (2017), Why cheat India (2019), English Vinglish, मिल बंटे सन्नाटा , फुकरे आदि।

इस प्रकार कह सकते हैं कि शिक्षा अनवरत चलने वाली प्रक्रिया है।इस प्रक्रिया में शिक्षक का ज्ञानी, सजग, दूरदृष्टा और धैर्यवान होना आवश्यक है तो छात्र का ज्ञान पिपासु

प्राचीन भारतीय शिक्षा पद्धति ने जिस तनावरहित, सहज शिक्षा का मार्ग दिखाया वह वर्तमान शिक्षा प्रणाली में बहुत प्रासंगिक है। मूल्यहीन शिक्षा हिंसक और आत्महंता प्रवृत्तियों की जननी बन जाती है। हिन्दी सिनेमा पर यदि विहंगम दृष्टि डाली जाये तो वह वर्तमान शिक्षा व्यवस्था की खामियों को उजागर करता हुआ वह प्राचीन भारतीय मूल्यपरक शिक्षा का समर्थन करता है।

वेब पेज (लिंक) सूची :

1. hi.m.wikipedia.org/w
2. What's up post
3.bhaktimaal.com
4.bharatdiscovery.org
5.kreately.in
6.You Tube
7. Lyricsindia.net
8.m.hindi.webduniya.com
9.scrolldroll.com
10.hinditracks.in
11.hindilyrics.net

डॉ. सीमा शर्मा
एसोसिएट प्रोफेसर
जानकी देवी मेमोरियल कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय।
ईमेल- drseema.sharma@gmail.com

इस बेहद संकरे समय में एक बेचैन

वेदप्रकाश सिंह

समकालीन कविता को वर्तमान बेचैनियों से भर देने की कोशिश अच्युतानंद मिश्र की कविताओं में देखी जा सकती है। ये कविताएं एक ओर जहां परिवर्तन, बदलाव की आग लिए हैं वहीं इनमें निराशा, हताशा की राख भी है। कवि का अपने लिए सचेत लेकिन निष्क्रिय रहने का भाव आत्मधिक्कार को जगाता है। वह रात भर बाहर ठंड में ठिठरते हुए बच्चे और विचारों की चादर ओढ़े कवि-व्यक्ति की टक्कर करा देते हैं। यह विडंबना ही है कि जो विचारवान सचेत लोग हैं वे प्रायः निष्क्रिय बने रहते हैं। यह निष्क्रियता 'जो है' और 'जो होना चाहिए' के बीच के फासले को बढ़ा रही है। अनेक कविताओं में इस फासले की बेचैनी दर्ज है।

कवि मुक्तिबोध की तर्ज पर ऐसे गंभीर प्रश्न खड़े करता है जो वास्तविक संसार ही नहीं कविता के संसार में भी खतरनाक और त्याज्य बना दिये गए हैं। वर्तमान और लगातार संकरे होते जा रहे समय में जीने की जरूरी कोशिश करते लोगों की आवाज इन कविताओं में मिलती है। प्रकृति के गतिशील बिंबों से खुद को जोड़ते हुए रास्तों की तलाश और उसकी बेचैनी का स्वर भी यहां मिलता है।

विद्रोह की चेतना को अग्नि देने का भाव इन कविताओं की विशेषता है। यदि समाज में अत्याचार और दमन है। लोग इसे झेल रहे हैं। कोई इसका विरोध भी कर रहा है, तो लोगों को चाहिए कि अत्याचार का खुलकर विरोध करें। 'म्यांमार की सड़कों पर खून नहीं था' (आंग सान सू की के लिए) शीर्षक कविता में विद्रोह की स्थितियां हैं, लेकिन विद्रोह नहीं हो रहा है। एक अकेले का संघर्ष है लेकिन लोग चुप हैं। दुनिया और देश भर के लोग चुप हैं। लोग भूखे हैं और आत्महत्या कर रहे हैं। इनके ठंडे खून को खून नहीं माना जा सकता। घरों से बाहर आ जेल की दीवारें तोड़ सकने का भाव इनके मन में क्यों नहीं आ रहा है। इसी बेचैनी के भाव को यह कविता व्यक्त करती है।

आज-कल देशभक्ति बनाम व्यक्ति की जंग चल रही है। अदृश्य देशभक्ति जीते जागते आदमी को भीड़ का रूप धरकर मार रही है। इससे परेशान वह भी है जिसके सिर पर देशभक्ति का सबसे अधिक दारोमदार है। यानी एक सैनिक। एक सैनिक भी व्यक्ति है।

उसका भी मन है, परिवार है, पत्नी, बच्चे हैं। वह भी आराम चाहता है। युद्ध का माहौल, कठिन जीवन स्थितियां उसके जीवन को सुखा रही हैं। ऐसी ही एक कविता है 'निहाल सिंह'। निहाल सिंह के पैरों में, मन में उसके गांव की हरियाली है। वह अपनी बीवी-बच्चों के पास लौट जाना चाहता है।

वह छुट्टी लेकर पहुंच जाना चाहता है उन सबके पास। लेकिन उसकी छुट्टी की दरख्वास्त नामंजूर हो गई है। एक ऐसी लाचारी इस कविता में व्यक्त है जो समाज में व्यक्त होने से रह गई है। जिसे व्यक्त करने वाली आवाज 'देशभक्ति' के नारे और शोर के नीचे दबा दी गई है। इंसान को इंसान के खिलाफ, फौजों को फौजों के खिलाफ करने वालों के खिलाफ एक दिन खड़ी होंगी फौजें। यह सपना निहाल के बहाने कवि और कवि के बहाने उसके सभी संवेदनशील पाठक सोचते हैं।

व्यक्ति, समाज और देश के बारे में अनेकविध चिंताएं इन कविताओं में व्यक्त हैं। कवि उस व्यक्ति के इतने नजदीक होकर सोचता है कि वह प्रायः 'मैं' रूप में आता है। कथा में वाचक की तरह इन कविताओं का भी वाचक है। वह कवि से ज्यादा साधारण जन है। जो देश के सबसे जरूरी और जरूरतमंद का प्रतिनिधित्व करता है। वह 'मैं' या कहें साधारणजन 'मिलों में, मंडियों में, खेतों में घिसटता हुआ, लुढ़कता हुआ' दिख जाएगा। जिसके पास पैसे नहीं गुजरे दिनों की पूंजी है सिर्फ। जिसके सामने देश और उसके लोगों के बदले तपेदिक से खांसते पिता का चित्र आता है। देशभक्ति के प्रतीक झंडे को देखकर वह सोचता है ऐसे कितने झंडों को जोड़कर उसकी माँ की साड़ी बन सकती है। आजकल तो ऐसी प्रचंड और सर्वव्यापी देशभक्ति फैली है कि झंडों का आकार और देशभक्ति के नारे की आवाज बढ़ती जा रही है। इतने बड़े झंडे जिनसे न जाने कितनी (भारत) माताओं की साड़ियां बन सकती हैं। भारत माता की अदृश्य उपस्थिति के सामने दृश्यमान माताओं को हाशिये पर फेंक दिया गया है।

स्त्री के दुख को व्यक्त करती कविताएं भी इस संकलन में हैं। 'आंख में तिनका या सपना' और 'सबसे उदास औरत' कविताओं में सपने और उनके टूटने का दर्द बयान किया गया है। टूटने से निकलने वाले आंसुओं को कभी चूल्हे से धुएं और कभी किसी और कारण के नीचे छिपाने की कोशिश मनिया की माँ करती है।

मिस जोजो भी उसी दुख से जुड़ी है। लेकिन वह इसे छिपाने की कोशिश नहीं करती बल्कि स्पष्ट कह देती है। दुख की निरंतरता चलती ही रहती है दोनों ही स्थितियों में।

प्रकृति को बचाने की चिंता किस प्रकार महज दिखावा बन कर रह गई है इसे 'आखिर कब तक बची रहेगी पृथ्वी' कविता में व्यक्त किया गया है। दुनिया के बड़े शक्तिशाली बीस देश बढ़ते तापमान पर अपनी छद्म चिंताओं में डूबे हैं। वे नहीं बचा रहे हैं किसानों को, उनकी फसलों को, हरियाली को वे केवल दिखावटी चिंताओं में लिप्त हैं। किसानों की आत्महत्याएं उनके एजेंडे से बाहर हैं। ऐसे में कवि प्रश्न करता है 'आखिर कब तक/ बची रहेगी पृथ्वी ?'

दुनिया जैसी है उसे कवि स्वीकार नहीं करता है। जैसी चाहता है वह बना नहीं सकता। दुनिया का वर्तमान स्वरूप या नक्शा बदलकर एक ऐसी दुनिया की तमन्ना कवि करता है 'जहां हर उठे हुए हाथ में फावड़ा/और हर झुके हुए हाथ में रोटी' हो। यह दुनिया विषमता से जर्जर है। यहां जो मेहनतकश है 'पत्थरों को तोड़ते हाथ' हैं, उन हाथों को 'फूलों को सहलाने का वक्त' और सुविधा मयस्सर नहीं। दुनिया के हर शहर में 'सड़कों पर बहुत है भीड़/पर इंसान नजर नहीं आते'। भीड़ और इंसान का फर्क इन दिनों लगातार बढ़ता जा रहा है। आदमखोर भीड़ शहरों और गांवों में बढ़ती जा रही है। उनमें एक अदद इंसान नहीं मिलता। लेकिन भीड़ जब एक विचार और सार्थक बदलाव की चिंगारी से संचालित होगी इसका इंतजार कवि और समाज को है।

कवि को लोगों का सहते चले जाना, उनका निष्क्रिय रहना नापसंद है। उनमें बेचैनी, चिंगारी और परिवर्तन की इच्छा का अभाव है। वे दाढ़ी बनाते हुए कटने पर उफ्फ तो करते हैं लेकिन सड़कों पर पड़े लाल खूनी धब्बे देखकर चुप रहते हैं। ऐसे लोग सब जगह, सब देशों और शहरों में हैं। कवि इनमें चेतना जगाकर वर्तमान शोषण पर आधारित व्यवस्था को तोड़-बदल देने की इच्छा व्यक्त करता है।

समाज और व्यवस्था दिनोंदिन मनुष्य विरोधी हो रही है। कवि ऐसे में उल्लास और शांति की बात कैसे कर सकता है। बोलने पर जब जितने पहरे बिठाए जाएंगे कविताएं उतनी ही तेज आवाज में विरोध का झंडा बुलंद करेंगी। 'आंख में तिनका' संग्रह की कविताएं अपने समय की अमानवीयता के खिलाफ विरोध की आवाज हैं।

ये कविताएं वर्तमान मनुष्य, समाज और व्यवस्था से अपना विरोध और बेचैनी दर्ज कराती हैं। इनमें जितनी निराशा है उतनी ही आशा भी है। जो है उसे बदल देने की इच्छा का अभाव निराशा पैदा करती है। ये कविताएं किसी दिवास्वप्न की भांति नहीं हैं। ये कल्पना की दुनिया में विचरण नहीं करती हैं। इनमें यथार्थ के कांटे और पत्थर हैं। बेचैनी और निराशा इनमें भरी हुई है।

बेचैनी पहाड़ से बहती तेजधार नदी की तरह इन कविताओं में सर्वत्र प्रवाहित होती है। इसी बेचैनी से कोई न कोई रास्ता निकालने की कोशिश कवि अपने समय में कर रहा है। वह इस बेहद संकरे समय में अपनी बेचैनी के साथ जी रहा है और रास्ते की तलाश कर रहा है-

सभ्यता की शिलाओं पर
बहती नदी की लकीरों की तरह
हम तलाश रहे थे रास्ते
इस बेहद संकरे समय में!

हमारे समय को बेहद संकरा बनाने वाली कौन-सी स्थितियां और शक्तियां हैं ? इसकी पहचान कोई मुश्किल काम नहीं है। ये कविताएं मानकर चलती हैं कि पाठक उन स्थितियों से वाकिफ है जो हमारे समय को निरंतर संकरा बना रही हैं। ऐसी कम ही कविताएं हैं जहां उन स्थितियों का वर्णन-चित्रण किया गया हो। मुक्तिबोध और धूमिल की परंपरा से जुड़ा कवि मुक्तिबोध की भांति उस 'प्रोसेशन' में शामिल व्यवस्था के क्रूर चेहरे को कविता में स्पष्ट नहीं करता है। इसका कारण संभवतः यह है कि वे चेहरे अब किसी से छिपे नहीं हैं। उन्हें जान पाना मुश्किल नहीं है। जिन्होंने पूरी व्यवस्था को अपने अधीन बना लिया है वे रात के अंधेरे में नहीं दिन के उजाले में सक्रिय हैं। मुक्तिबोध के समय जो 'प्रोसेशन' अंधेरे में चल रहा था वह अब दिन में बेखौफ खौफ जगाता चल रहा है।

कवि की मूल चिंता व्यवस्था के अमानवीय होने से बनी स्थितियों को दर्ज करने की है। यानी यहां अमानवीय स्थितियों का प्रभाव दिखता है। समय को संकरा बनाने वाली स्थितियां नेपथ्य में हैं।

उस प्रभाव की अनेक बार, अनेक रूपों में प्रस्तुतियां यहां दिखती हैं। यह प्रभाव इतना करीब से दर्ज है कि वह आपका-हमारा लगता है। उसमें मां, पिता, बहन, पत्नी और बेटी सब हैं। एक घर है। जो कहने को ही घर है। अभाव-बेरोजगारी के समुद्र में यह घर डूब रहा है। उसे बचाने की बेचैनी पाठक महसूस करता है।

बेचैनी और उसकी आग कवि जन-मन में जगाना चाहता है। लेकिन जब ऐसा नहीं होता है तो चारों ओर दिखता है ठंडापन। यही ठंडापन कवि-मन में निराशा बनकर उभर आती है। वह प्रश्न करता है इस ठंडेपन पर। इस ठंडेपन से उपजी निष्क्रियता पर। और निष्क्रियता से उपजी-निर्मित अमानवीय स्थितियों पर। कवि को यह प्रश्नाकुलता कबीर और मुक्तिबोध से मिली है। भूख और पेट की आग सतत जल रही है। चूल्हे और मनुष्य में रहने वाली आग अनुपस्थित है। भीतर की आग बाहर के इस ठंडेपन पर चीख रही है। यह चीख इन कविताओं में अनेक जगह सुनी जा सकती हैं-

बस सुलगती हुई इच्छाएं
दम तोड़ती आशाएं
मुंह फाड़े ठंडा चूल्हा था
जो अब तक टूटा नहीं था
आग नहीं थी उसमें
आग सिर्फ भीतर थी
बाहर के ठंडेपन पर
चीखती हुई-सी।

कवि अपने प्रश्नों, बेचैनियों से इस ठंडेपन को खत्म करना चाहता है। ये कविताएं अग्नि की अनुपस्थिति के साथ-साथ उसकी आकांक्षा की कविताएं भी हैं। ये कविताएं अपने समय के प्रश्नों को दर्ज करती हैं। ठंड में बाहर मरते बच्चे और सोते समाज को यहां आमने-सामने रखकर दिखाया गया है। चांद और उसकी भरमाने वाली झूठी रोशनी को नापसंद करता कवि लिखता है-

मैं चांद से बहुत डरता हूँ
मुझे सबसे खतरनाक लगती है
चांद की रोशनी
जो उजाले और अंधेरे को झुठलाती है
वह बच्चा भी तो अब तक
किसी पत्थर पर सिर रखे
सोया होगा
पर क्या, उसने कुछ खाया होगा ?
क्या उसके कपड़ों से बाहर उधड़ी देह
जिससे रिस रहा था खून
सूख गया होगा
क्या किसी ने उसे चादर ओढ़ाया होगा?
क्या कल फिर सुबह
सड़कों पर वह यूं ही निकल पड़ेगा
रात को कहां लौटेगा वह ?
क्या उसने भी मेरी तरह
चांद को गुस्से से देखा होगा ?
क्या वह बच्चा मैं था?
क्यों नहीं था
मैं वह बच्चा?
वह बच्चा कोई और क्यों है ?
अगर पत्थर देश का है
तो बच्चा देश का क्यों नहीं ?
देश गहरी नींद में सोया था

बच्चा पूरी रात ठिठुरता रहा
और मैं ?
विचारों की चादर ओढ़े
रात भर भटकता रहा!

इस लंबे काव्य-उद्धरण में वह बच्चा, उसके शरीर से रिस रहे खून और गहरी नींद में सोते देश को एक साथ देखने पर अपने समय की एक तस्वीर सामने आती है। बड़ी भयावह तस्वीर। बड़ी दिलचस्प बात है कि मुक्तिबोध की प्रसिद्ध कविता 'अंधेरे में' में भी एक बच्चा आता है। उसमें भी कवि एक व्यक्ति को देख प्रश्न करता है।

वह फटे हुए वस्त्र क्यों पहने है ?
उसका स्वर्ण-वर्ण मुख मैला क्यों है ?
उसके वक्ष पर इतना बड़ा घाव कैसे हो गया ?
उसने कारावास का दुख क्यों झेला ?
उसकी स्थिति इतनी भयानक क्यों है ?
उसे रोटी कौन पहुंचाता है ?
पानी कौन देता है ?

वह बच्चा 'अंधेरे में' नवस्वतंत्र देश का प्रतीक लगता है। यहां वही बच्चा खून बहाता ठंड में ठिठुरता बाहर लेटा है और पूरा देश, उसकी जनता गहरी नींद में सो रही है। कवि उस नींद को तोड़ना चाहता है। 'देश, बच्चा और मैं' शीर्षक इस कविता में भी चांद को सौन्दर्य का प्रतीक नहीं माना गया है। हिंदी कविता के सौन्दर्य-बोध को यह मुक्तिबोध की देन है। इसे परवर्ती पीढ़ी ने आत्मसात किया है।

अच्युतानंद मिश्र की कविताओं में प्रश्नाकुलता और बेचैनी सर्वत्र उपस्थित है। 'शहर में एक बस्ती थी' कविता में अपार विषमता के दृश्यों पर कवि प्रश्न खड़े करता है। यहां भी वह बच्चा है। गंभीर तथा खतरनाक प्रश्नों को कवि कविता में पूछने की कोशिश करता है। इन प्रश्नों के जवाब यहां अनुत्तरित हैं। ये सवाल हैं-

सवाल यह भी था
कि वह बच्चा
किस देश, किस मिट्टी
किस हवा, किस शहर का है
सवाल था कि उसकी मां
किस युग से चली आई थी
उसका पिता पीठ के बल रेंगकर
शहर की कोठियों में
क्यों चिराग जला रहा था
सवाल था कि
शहर में बस्ती क्यों थी
ये सवाल उदास आंखों की उदासी
हंसते चेहरों के उजास का
पता देते थे
शहर जिनके पांव तले थी
ये बस्तियां
जिनकी छाती पर पैर रख
जवान हुए शहर

कवि इन परजीवी शहरों की आलीशान कोठियों के उजाले और बस्तियों के अंधेरे में अंतर्संबंध बताता है। एक की छाती है तो दूसरे के पैर। एक में अंधेरा है तो दूसरे स्थान पर उजाला। यह अंधेरा उन उजालों की कीमत पर आया है। वहां के उजाले ने यहां अंधेरा किया है। इसी विषमता पर कवि प्रश्न खड़े करता है।

विषमता और बेरोजगारी, अभाव और गरीबी की स्थितियां इतनी दुर्दमनीय हो गई हैं कि पूरा परिवार उसमें पिस रहा है। सभी असहाय हो गए हैं। सभी एक-दूसरे से पूछते हैं-'क्या करें। करने की निरर्थकता के बाद यह प्रश्न पैदा हो रहा है। कैसे स्थितियों को बदलें।

'शायद कोई बाहर गया' कविता में बहन, माँ और पिता पूछते हैं-क्या करें और टूटते घर के साथ टूटते जा रहे हैं-

बहन पूछती है क्या करें ?
माँ पूछती है क्या करें ?
पिता पूछते हैं क्या करें ?
आखिर क्या करें ?...
यह घर टूट नहीं रहा
बस धीरे-धीरे तोड़ रहा है सबको
सब धीरे-धीरे टूट रहे हैं इस घर में
एक दिन बचा रह जाएगा बस ये घर
पर क्या घर बचा रह जाएगा
दीवारों से चिपकी ये बुझी आंखें सवाल करती हैं

बदले समय में कविता का प्रयोजन भी बदला है। अब कविता स्वांत सुखाय नहीं रह गई है। न ही कविता का उद्देश्य आनंद की प्राप्ति है। ऐसे में कवि साफ शब्दों में बताना चाहता है कि कविता लिखने का प्रयोजन विरोध और बदलाव है। वह हिंसा, दमन को रोकने वाले हाथों को हाथों से जोड़ने का उद्देश्य लेकर चल रहा है। वह बलिदान के भाव में भरकर कविता नहीं लिखता है बल्कि प्रतिरोध का भाव, एकजुटता जगाने का भाव भरकर कविता रचता है-

मैं इसलिए नहीं लिख रहा हूँ कविता
कि मेरे हाथ काट दिए जाएं
मैं इसलिए लिख रहा हूँ
कि मेरे हाथ तुम्हारे हाथों से जुड़कर
उन हाथों को रोकें
जो इन्हें काटना चाहते हैं

विषमता के अनेकविध दृश्य हमारे चारों ओर नजर आते हैं। इसे कवि नजर अंदाज नहीं कर सकता।

इसे वह कविता में लाकर इनकी विद्रूपता को प्रकट कर देता है। इनमें जहां एक ओर गर्म पकौड़ियां हैं, रोशनी के झाड़ फानूस हैं। वहीं दूसरी ओर पटरियों पर 'भूख की कतारें' हैं। 'भूख की कतारें' बड़ा ही मारक बिंब है। असंख्य-बेघर भूखी जनता कतारों में बैठी है।

विषमता के देशव्यापी दृश्यों के बीच कवि विडंबना को भी पहचानता है। एक ओर विकसित होने की वैश्विक घोषणा तो दूसरी ओर आत्महत्या करते लाखों किसान हैं। किसे सच मानें-घोषणाओं को या मरते किसानों को ? यह समय 'उत्तर-सत्य' का है। ऐसे में जो सच नहीं है उसे सच बताया-बनाया जा रहा है। कवि और कविता 'उत्तर-सत्य' के भ्रम को तोड़ती है। 'ठीक उसी समय' शीर्षक कविता में कवि ने लिखा है-

जब प्रधानमंत्री लौट रहे थे
राष्ट्रपति भवन के जलसे से
जो कि रखी गई थी
किसी विदेशी मेहमान के स्वागत में...
ठीक उसी समय
जब मंत्री ने
साथी अधिकारी के साथ
तय किया
किस विदेशी कंपनी को
बुलाने से ज्यादा फायदा है...
ठीक उसी समय
जब देश के
किसानों ने
तय किया ऐसे में सबसे बेहतर है
आत्महत्या करना
ठीक उसी समय
मिन्टो ब्रिज के नीचे

कड़ाके की सर्दी से
ठिठुरता हुआ एक भिखारी
मरता है
यह सब कुछ ठीक उसी समय
जब अमरीका के राष्ट्रपति ने
घोषणा की-
भारत अब विकास कर रहा है।

भारत के विकास की तेज होती घोषणाओं और किसानों की आत्महत्या की बढ़ती घटनाओं का क्या कोई साम्य है ? इस पर विचार करने के लिए कविता बाध्य करती है।

मनोरंजन और सूचना क्रांति ने वास्तविकता को 'आस्वाद्य' बनाकर प्रस्तुत करना शुरू कर दिया है। वे वास्तविकता की प्रस्तुति करते हुए उसे खबर मात्र में बदल देते हैं। भूखा बच्चा उनके लिए खबर है। बाढ़ में डूबता गांव एक खबर है। पानी में डूबते बच्चे की फूली हुई लाश उनके मात्र खबर है। कवि इन मर्मांतक दृश्यों के मात्र खबर बन जाने पर चिंता जाहिर करता है। 'बाढ़-2' कविता की पंक्तियां हैं-

डूबता हुआ गांव एक खबर है
डूबता हुआ बच्चा एक खबर है
खबर के बाहर का गांव
कब का डूब चुका है
बच्चे की लाश फूल चुकी है
फूली हुई लाश एक खबर है

इन खबरों की भरमार और सपाट या चटखदार प्रस्तुतियों ने दर्शकों का मनोरंजन कर दिया है। उसकी संवेदना को बढ़ाने का कार्य वह नहीं कर सकती है। खबरें इतनी तेज और ज्यादा हो गई हैं कि वे भूलने वाला समाज निर्मित कर रही हैं। कविता 'भूलने के विरुद्ध' एक प्रयास है। कवि पाठक को चेताता है कि वे हमें भूलना सिखा रहे हैं। अब यह हम पर है कि हम भूलने के विरुद्ध हैं या साथ ? 'बाढ़-4' कविता में कवि में लिखा है-

एक डूबते हुए आदमी को
एक आदमी देख रहा है
एक आदमी यह दृश्य देखकर
रो पड़ता है
एक आदमी आंखें फेर लेता है
एक आदमी हड़बड़ी में देखना
भूल जाता है
याद रखो
वे भूलना सिखाते हैं

कवि इस चौथे प्रकार के समाज के विस्तार को रोकना चाहता है। वह हड़बड़ी में सब कुछ जरूरी देखना भूल रहा है। यह भूमंडलीकरण की अपसंस्कृति में जन्मा नया मनुष्य है। संवेदना नहीं उपभोग की चेतना मात्र से संचालित यह नया मनुष्य भूमंडलीकृत समाज बना रहा है। अच्युतानंद मिश्र की कविताएं इसी समाज को बदलने की बेचैनी से निर्मित कविताएं हैं।

इस विषमता ग्रस्त देश में सबसे बड़ी आबादी युवकों की है। बिना शिक्षा, रोजगार और साधन के लाखों युवक सड़क पर हैं। अनेक कामों में शामिल होने के लिए स्वतंत्र लेकिन दिशाहीन। ऐसे जवान होते लड़के गरीबी का स्वाद और अमीरी का स्वप्न एक साथ भोग-देख रहे हैं। भूख की खातिर नकली जुलूसों में शामिल हो रहे हैं। सचमुच की भूख से बिलबिलाते इन जवान लड़कों को अलग-अलग बहानों से मारा जा रहा है। ऐसे युवक मर भी रहे हैं और भीड़ बनकर मार भी रहे हैं। 'जवान होते लड़के' कविता उन मरने वाले लड़कों के बारे में है। जब इन्हें मार दिया जाता है तब पुलिस इन्हें 'खूंखार, तस्कर, पॉकेटमार और नशेड़ी' बताती है। मां-बा पके लिए उनकी आंखों के तारे थे। भूखे और जवान दोनों थे। चुपचाप भूखे रहकर मर जाने का हुनर इन्होंने नहीं सीखा था। इन्हें शिक्षा-रोजगार मिलता तो देश आगे बढ़ता। लेकिन ऐसे लाखों-करोड़ों जवान लड़के भविष्यहीन, रोजगार विहीन भूख से परेशान देश भर में घूम रहे हैं।

चुनाव आते हैं और जाते हैं। वादों से देश को बदलने की कोशिश कुछ दिन चलती है। उसके बाद वही स्थिति बनी रहती है जो पहले थी। या कहें स्थितियां पहले से भी बदतर होती जा रही हैं। वादों की संख्या और तरीके नये हो रहे हैं। 'इस चुनाव के बाद' कविता की पंक्तियां हैं-

इस चुनाव के बाद
दिन को कुछ और कहा जाएगा
रातें ऐसी नहीं होंगी
बच्चे खुश रहेंगे हरदम
पत्नी की साड़ी का रंग
हरा, नीला, पीला, लाल
और गुलाबी होगा
पैर और सड़क के बीच
एक जोड़ी अदद चप्पल हुआ करें
लेकिन ऐसा कुछ भी नहीं होता

बेरोजगारी के प्रभाव और किसानों की स्थिति पर इस संकलन में कई कविताएं हैं। संग्रह की 'किसान' शीर्षक कविता की अंतिम पंक्तियां आज के समय में किसान की स्थिति को अचूक तरीके से व्यक्त करती हैं। एक दिन किसान भी किसी विलुप्त प्रजाति की तरह हो जाएंगे। जमीन के भीतर से उनके अवशेष मिलेंगे। लोग कहेंगे यह किसान का माथा है, इसमें से फसल की गंध आ रही है। लोग कुतूहल से यह सब देखेंगे। यह भयावह कल्पना कई सदियों के बाद की है। लेकिन क्या तब तक दुनिया बची रहेगी तब किसान ही लुप्त हो जाएंगे ?

इस प्रश्न का जवाब बहुत मुश्किल नहीं है। कविता की आज के समय में बेहद प्रासंगिक पंक्तियां हैं-

कई सदी बाद
धरती के भीतर से

निकलेगा एक माथा
बताया जाएगा
देखो यह किसान का माथा है
सूंघों इसे
इसमें अब तक बची है
फसल की गंध
यह मिट्टी के
भीतर से खींच लेता था जीवन रस
डायनासोर की तरह
नष्ट नहीं हुई उनकी प्रजाति
उन्हें एक एक कर
धीर-धीरे नष्ट किया गया।

एक सचेत और बेचैन कवि की इन कविताओं का संसार बहुत विस्तृत है। यह कवि का पहला काव्य संग्रह है। आशा है अन्य आगामी संग्रहों में कुछ ऐसे विषयों पर भी कविताएं होंगी जो यहां दर्ज नहीं हो पाई हैं। कविता में छंद की अनुपस्थिति वर्तमान कविता की पहचान बन गई है। अगर कविताएं छंद में आने लगें तो उनका विस्तार भी अधिक हो सकेगा।

वेदप्रकाश सिंह
संप्रति – हिंदी अध्यापक, ओसाका विश्वविद्यालय, जापान
दूरध्वनि - +81 09081290198
ई-मेल- vedprakashsinghmp@gmail.com

संत गरीबदास का समाजपरक मूल्यांकन

डॉ. अरुणा दुबलिश

मध्ययुगीन संतों की समाज को बहुत बड़ी देन है। अज्ञान, निराशा व शोक के वातावरण में डूबी जनता को ज्ञान, आशा एवं उत्साह से परिपूर्ण करने का दायित्व इन्हीं संतों ने निभाया। समाज को जागरुक करने, उनके दोषों का नाश करने के लिए अनेक संतों का धरती पर अवतरण हुआ। ऐसे ही संतों में गरीबदास जी भी थे।

गरीबदास जी का जन्म वैशाख पूर्णिमा संवत् 1774 में छुड़ानी ग्राम में हुआ था। उस समय औरंगजेब का क्रूर शासन समाप्त हो गया था। हिन्दुत्व और इस्लाम के विद्वेष से धधकती हुई इस ज्वाला को शांत करते हुए संत गरीबदास जी कार्यक्षेत्र में अवतीर्ण हुए।

गरीबदास जी प्रवृत्ति मार्ग के अनुयायी थे। ये अत्यन्त सीधे-सादे और क्षमाप्रिय विनम्र संत थे। बाह्याडंबरों, कर्मकांड आदि का इन्होंने दृढ़तापूर्वक खंडन किया। मानव कल्याण ही गरीबदास जी के जीवन का उद्देश्य रहा।

समाज के दीन-दुःखी और दरिद्रों के प्रति दया-भावना रखते हुए समाज को शोषण एवं उत्पीड़न से मुक्त करके भेदभाव रहित समाज की स्थापना की। गरीबदास जी प्रखर एवं तेजस्वी संत थे। इनका अपने युग पर अमिट प्रभाव पड़ी। इनकी वाणियों में कबीर के सिद्धान्तों की गहरी छाप है, संभवतः इसीलिए इन्हें कबीरदास जी का अवतार माना जाता है-

"दास गरीब कबीर हैं, कबीर गरीब जान"
(अवधूत भक्तराम, गरीबाचार्य महाराज का संक्षिप्त जीवन परिचय, पृ0 23)

संत गरीबदास के समय भारत की सामाजिक स्थिति अत्यन्त दयनीय थी। अनेक कुप्रथाओं यथा बाल-विवाह, सतीप्रथा, देवदासी प्रथा का प्रचलन समाज में था। संपन्न घरानों में विलासिता थी तो ब्राह्मण वर्ग भ्रष्ट व अनाचारी हो गया था।

सामान्य जन की दुर्दशा थी। उसको निर्देशित करने वाला कोई न था। हिन्दु समाज अपने गौरव को भुलाकर आस्थाहीन हो दीन-हीन हो गया था।

ऐसी स्थिति से उत्पन्न सामाजिक चेतना संत गरीबदास के काव्य में यत्र-तत्र दिखाई देती है। उन्होंने सामाजिक कुरीतियों-जातिगत भेदभाव, छूआछूत, सामाजिक अशांति एवं विक्षुब्ध वातावरण को देखा और अपनी बानियों में उसे उतारकर समाज व जनता को सहारा देने का प्रयास किया।

इस समय सामाजिक अवस्था के समान ही धार्मिक अवस्था भी अत्यन्त शोचनीय थी। संतों एवं सूफियों के उपदेशों के कारण भक्तिकाल में जो धार्मिक एकता व पवित्रता विकसित होनी शुरु हुई थी, वह इस काल में आकर औरंगजेब की कट्टरता और विलास-वैभव की अधिकता के कारण धार्मिक पतन की ओर बढ़ने लगी। संतों के प्रयास से सामाजिक और धार्मिक एकता व उदारता की ओर समाज की दृष्टि गयी।

संत गरीबदास मानव-सद्वृत्तियों के पोषक थे। सद्वृत्तियों के विकास से समाज में साम्य एवं ऐक्य का प्रसार होता है। त्याग, दान, संयम आदि वृत्तियों से आर्थिक समानता का विकास भी होता है। इससे समाज के व्यक्तियों में परस्पर सौहार्द्र और उदारता की वृत्ति विकसित होती है।

संत गरीबदास सच्चे सामाजिक प्राणी थे। गृहस्थ धर्म का पालन करते हुए ही उन्होंने समाज व धर्म की कमियों की कटु आलोचना की। परनारी को परिवार व समाज के लिए हानिकारक माना-

"परनारी नहिं परसिये सुनो शब्द सलतंत।
धर्मराय के खंभ सै ऊध्वमुखी लटकंत।।
बोलूंगा निर्पक्ष हो जो चाहै सो होय।
घर घर दीपक जलत है, सब की एकै लोय।।

(ग्रन्थ साहेब, साखी 118, 125, पृ0 104-05)

संत जनों का सत्संग समाज को नई दिशा प्रदान करता है। वे समाज को सुधारने के लिए सच्चा उपदेश देते हैं। व्यक्ति को सुबुद्धि और समत्व प्रदान करते हैं, प्रेम, विश्वास, ज्ञान और सद्विचार की प्रेरणा देते हैं। सत्संगति से ज्ञान की प्राप्ति होती है-

'साधो की संगत करें, बड़े भाग बड़ देव।
आपन तो संसा नहीं और उतारे खेब।।
(संत बानी संग्रह, भाग-1, पृ0 129)

संत गरीबदास ने समाज के कल्याण के लिए आचरण की शुद्धता पर बल दिया है। मन का खोट त्यागना ही वास्तविक आराधना है, माला फेरना तो व्यर्थ है-

'गरीब मत सेती खोती घड़ै, तन से सुमिरन कीन।
माला फेरे क्या हुआ, दुर कुरन वेदीन।।
(रत्न सागर, पृ0 54)

जो व्यक्ति वेश में साधु है, किन्तु आन्तरिक शुद्धि से रहित है, वह समाज में कपटाचरण का प्रतीक है। ऐसे व्यक्ति समाज के विनाश का कारण होते हैं-

'कथनी में तो कथ नहीं करनी कड़बी दिब्ब।
विष की फाकी फाकि है, जिनकूं भेटैं रब्ब।।
(ग्रन्थ साहेब, साखी 65, पृ0 97)

संत गरीबदास ने कबीरदास की भाँति अपने समय में प्रचलित सामाजिक अन्तर्विरोधों और समस्याओं को सुलझाने का प्रयास किया। वे एक महान चिन्तक, विचारक और समाज सुधारक थे। उन्होंने सामाजिक कल्याण को सर्वोपरि माना। अध्यात्म के साथ-साथ सामाजिक चेतना को जाग्रत करने का प्रयास भी अपने काव्य में किया। साधना की अनेक कड़ियों को एक सूत्र में पिरोकर समाज के सम्मुख प्रस्तुत किया।

कर्मकांड बाह्याडंबर का विरोध करते हुए सामाजिक विकारों को नष्ट करने का पूरा प्रयास किया-

मूंड मुंडायै भसम तन लावै जटा बंधावै केश।
ऊँचे आसन मुद्रा पहरे नहीं सतगुरु उपदेश।।
(रत्न सागर, पृ0 302)

इस प्रकार संत गरीबदास ने सामाजिक प्रगति को आधार मानते हुए सद्गुणों के विकास पर बल दिया, मानवता के स्वर को मुखरित किया, विषम व प्रतिकूल परिस्थितियों में समाज में समानता एवं सद्भावना का संचार किया। धर्म के मूलभूत सिद्धान्तों यथा सत्य, अहिंसा, प्रेम, सहानुभूति, उदारता जैसे मानवीय गुणों का विकास कर सामाजिक एवं मानवीय मूल्यों को अपनाकर समाज को सुसंगठित, सुव्यवस्थित, श्रेष्ठ एवं समुन्नत बनाने का प्रयास किया। आज के इस भेदभाव के भयावह वातावरण में इनकी वाणी अमर सन्देश है। संत गरीबदास की व्यापक अभेद दृष्टि ने मानवमात्र के लिए सहृदयता का द्वार खोला। इनके काव्य में यथार्थवादी कटुता के साथ आदर्शवादी मधुरता का संयोग भी है।

डॉ. अरुणा दुबलिश
पूर्व हिन्दी विभागाध्यक्ष
371/6, प्रगति नगर,
मेरठ -250001 (उत्तर प्रदेश)
दुरभाष: 9219702074, 8630648114

नाटक और रंगमंच -- स्वरूप

डॉ. वसुधा सहस्त्रबुध्दे

प्राचीन कल से भारतीय साहित्य और जीवन के साथ नाटक का गहरा संबंध है। भारतीय आचार्योंने नाटक को दृश्य काव्य कहा है। जो इस अदभूत कला के वास्तविक स्वरूप को भली भाँति अभिव्यक्त करता है। काव्य का वह रूप जो दृशयात्मक हो। काव्य मनुष्य की संवेदनशील अनुभूति की अभिव्यंजना है। इस अभिव्यंजना का जो रूप रंगमंच पर दृश्य रूप में साकार होता है वह दृश्य –श्राव्य – काव्य अथवा नाटक है।

नाटक शब्द 'नट' धातु से निर्माण हुआ। 'नट' शब्द का प्रयोग अभिनेता के लिए भी होता है। 'नट' धातु से बने नाट्यम शब्द के अर्थ – नाचना , अनुकरण करना, स्वांग भरना, हाव-भाव प्रदर्शन और अभिनय करना आदि होते हैं। उसी से निर्मित नाटक शब्द का अर्थ है , ऐसी काव्य रचना जिसका अभिनय द्वारा प्रकटन होता है।

भारतीय नाट्यशास्त्र में नाटक को 'रूपक' की संज्ञा से जाना जाता है। आचार्य धनंजय का कहना है, 'जीवन की विभिन्न अवस्थाओं की अनुकृति उपस्थित करनेवाला यह दृश्य काव्य रूपक भि कहलाता है, क्यों कि इस में आरोप है। आचार्य विश्वनाथ ने अपने 'साहित्य दर्पण' में नाटक के लिए 'रूपक' संज्ञा का प्रयोग किया है। उन्होंने लिखा है 'इस रूपक का अभिनय होता है, जिस में इस जगत की विभिन्न अवस्थाओं का अनुकरण किया जाता है। यह अभिनय आंगिक, वाचिक, आहार्य और सात्विक होता है। धनंजय ने नाटक को अनुकृति कहा है। परंतु भरत मुनी द्वारा भी अनेक स्थलों पर छोटी छोटी परिभाषाएँ दी हैं। जिसमें वे नाटक को 'लोकवृत्तानुकरणम, लोककृत्तानुकरणम और पूर्व वृत्तानुचरित' कहते हैं।

इन सभी परिभाषाओं में अनुकरण महत्वपूर्ण है। इसे नाटक की मूल चेतना कह सकते हैं। वैसे नाटक पूर्णत: अनुकरणात्मक नहीं वह सर्जनात्मक रचना है। भारतीय आचार्यों ने नाटका का मूलतत्व 'रस' माना है। नाटक एक तरह से मनुष्य जीवन का

जो कहानी के साथ प्रस्तुत किया जाता है। कहानी में घटनाओं का संयोजन होता है। वस्तुत: सामान्य जीवन की घटनाएँ बिखरी हुई होती हैं। परंतु साहित्यिक रचना में यह रूप अन्विवितिपूर्ण होता है। जीवन के इस रूप को वे रस से परिपूर्ण मानते हैं।

भारतीय नाटकों में मनुष्य जीवन आत्मविश्वास से परिपूर्ण ,निराशा से दूर तथा आस्था से जुड़ा हुआ होता है। वह अनुकृति मूलक नहीं रचनात्मक ही है। जब नाटक रंगमंच पर आलंबन, उद्दीपन, स्थायी भाव, संचारी भाव तथा अनुभाव के साथ प्रस्तुत किया जाता है तब भावविभोर होकर दर्शक उसका रसास्वादन करते हैं और उनके मन में आनंद भाव निर्माण होता है।

नाटक के विषय में नाट्यशास्त्र भरत मुनीने कहा है –

‘न तज्ज्ञानं, न तच्छिल्पं, न सा विद्या, न सा कला, न सा योगी न
ततकर्मन्यन्नाट्येस्मिन न दृश्यते।। [नाट्यशास्त्र]

अर्थात संसार में न कोई ऐसा ज्ञान है , न कोई ऐसा शिल्प है, न कोई ऐसी विद्या है, न कोई ऐसी कला है, न कोई ऐसा योग है और न कोई ऐसा कर्म है जो नाट्यकला के अंतर्गत प्रदर्शित नहीं किया जाता। फिर एक विशाल जनसमुदाय के सामने उत्सव के रूप में वह अवतरित होता है। यह दृश्य और श्र्याव्य माध्यमों ,दिक और काल के आयामों तथा विभिन्न कलाओं के सहयोग से व्यक्त होता है।

रंगमंच शब्द का प्रयोग प्राय: दो अर्थो में किया जाता है। अंग्रेजी में इसके लिए दो शब्द प्रयुक्त है , थिएटर और स्टेज। थिएटर शब्द में एक व्यापक क्षेत्र समाहित हो जाता है, जिसमें स्थूल और सूक्ष्म दोनों की अभिव्यक्ति होती है। जब की स्टेज से रंगमंच के दृश्य-स्थूल रूप का बोध होता है। स्टेज के अर्थ में मंचसज्जा, प्रकाश व्यवस्था, अभिनेता आदि सब आता है , परंतु भाव पक्ष नहीं आता और रंगमंच में नाटक की लिखित संहिता, रंगकर्म, भाव और शिल्प भी शामिल है।

'रंगमंच अपनी अनुभूति पर आधारित है। नाटक की रचना प्रक्रिया कविता के निकट है, इसलिए सूक्ष्म संवेदनशील और गहन अनुभूति की आवश्यकता है। रंगमंच मानव की सर्जन प्रवृत्ति का क्रीडा –रूप माना गया है।

नाट्य कृति कल्पना मात्र से अनुभूति जगाती है और रंगमंच पर वह देश और काल की सीमा में एक जीवंत अनुभव के रूप में सामने आती है। रंगमंच की पूर्णता इसी में है किवह आंतरिक तत्व को बाह्य रूप प्रदान करती है। वह अदृश्य और अश्र्याव्य को दृश्य और श्र्यव्य रूप देता है और उसी बिन्दु पर रंगमंच एक सृष्टि बन जाता है।' [रंग और कला गोविंद चातक]

संस्कृत नाटक की परंपरा के साथ जुड़कर वर्तमान नाटकों ने पाश्चात्य प्रभाव का भी स्वीकार किया। आरंभ के नांदीपाठ को कुछ नए स्वरूप में प्रस्तुत किया गया। जैसे डॉ। शंकरशेष के पोस्टर, मायावी सरोवर। मणिमधुकर का 'रस गंधर्व, 'बूलबूल सराय'। सर्वेशदयाल सक्सेना की' बकरी'। आदि नाटककारों इसका उपयोग किया।

लोकनाट्य में लचीलापन होता है। प्राय: कथा मौखिक होती है। मंदिरों के प्रांगणों में अथवा चौराहे पर इस तरह कहीं भी इसकी प्रस्तुति हो सकती है।अर्थात लोककलाकारों का मंच अपने साथ होता है। सरल भाषा में गीत और संवाद , वाद्यों का गतिपूर्ण उपयोग तथा नर्तन के साथ दर्शकों को भाव विभोर कर देशकाल की मर्यादा से परे सहजता से प्रस्तुत होता है।

नाटक के संवाद स्वर के उतार- चढ़ाव के साथ ,गायन के रूप में भी प्रस्तुत किए जाते हैं। कुछ संवादों के बीच मौन के क्षण बड़े प्रभावी होते हैं। मौन रहते हुए एक दुसरेकीओर देखकर की हुई सार्थक हँसी, या आंखों से पानी बहना, या केवल स्पर्श से जो व्यक्त होता है वह शब्दों से परे होता है।

रंगमंच पर प्रस्तुत होनेवाला चरित्र वेषभूषा के कारण चरित्रगत विशेषताओं को आसानी से व्यक्त करता है तथा देशकाल की अभिव्यक्ति में भी सहायक होता है। इसलिए संवादों के साथ काल की अभिव्यक्ति में तथा नाट्यशय को अधिक गहरा बनाने में वेषभूषा सहायक होती है।

चरित्र विशेष की मानसिक उथल पुथल व्यक्त करने के लिए नाटककार विविध उपाय करते हैं। जैसे स्वगत - कथन, रेडियो की अनाउन्समेंट ,आकाश भाषित ,नेपथ्य से घोषणा , दूरदर्शन अथवा विविध पात्रों की सहायता। तथा प्रतीक, बिम्ब, ध्वनि द्वारा अभिव्यक्ति की जाती है। सूत्रधार अथवा निवेदक यह कार्य करते हैं।

डॉ. वसुधा सहस्त्रबुध्दे
शिक्षा- पीएच.डी.
विषय--डॉ.शंकर शेष का नाट्य साहित्य
सिद्धार्थ महाविद्यालय फोर्ट में 2009 तक हिंदी विभागाध्यक्ष के रुप में कार्यरत
प्रकाशित अनुवाद. हिन्दी से मराठी में -
1) चित्रा मुद्गल 2) डॉ.प्रतिभा राय 3) मधु कांकरिया 4) सुधा अरोड़ा 5) क्षमा कौल 6) नंदकिशोर नौटियाल 7) सादत हसन मंटो जैसे प्रख्यात लेखकों की कहानियां और उपन्यास का अनुवाद, **हिंदी नाटकों का मराठी में अनुवाद.-**
1) शंकर शेष 2) ललित सहगल 3) लक्ष्मी नारायण लाल 4) भीष्म सहानी

नवीन प्रकाशित पुस्तक

कोरोना काल में भले ही जिंदगी थम सी गई थी और हम सब अपने-अपने घरों में सिमट कर रह गए थे और एक अदृश्य भयावहता के आतंक से त्रस्त-ग्रस्त और आतंकित थे, हम अज्ञान थे इस बात से कि मौत हमें अपने भयानक पंजों में दबोचने के लिए कहाँ बैठी हैं? लेकिन कुछ ऐसे लोग भी थे जिन्होंने अपनी और अपनों की चिन्ता किए बिना इस भयावह और सर्वव्यापी महामारी के दौर में भी अपने कार्य को जारी रखा हुआ था। वह किसी देवदूत अथवा सुपर हीरो से कम नहीं थे और वह थे हमारे कोरोना योद्धा ! यह पुस्तक उन्हीं कोरोना योद्धाओं को कृतज्ञता ज्ञापित करते हुए समर्पित है।

घरों में सिमटी हुई जिंदगी जैसे थम सी गई थी लेकिन हमारे मस्तिष्क में कहीं न कहीं अनेक प्रश्नों का झंझावात चल रहा था। आखिर यह भयावह स्थिति किस प्रकार बनी? किस कारण बनी? क्यों हम अपने घरों में सिमट कर रह गए? क्या प्रकृति हमसे रूठ गयी? घरों में सिमटी हुई जिंदगी के बावजूद भी मन और मस्तिष्क में विचारों के अंधड़ चलते ही रहे और इन्हीं विचारों की उहापोह से कोरोना काल की कविताओं का सृजन हुआ और उन कविताओं के सृजन से यह नवनीत रूपी कोविड: काव्य संकलन “सिमटी जिंदगी” शैशव से प्रौढ़ता को प्राप्त हुआ। विविधता से परिपूर्ण यह काव्य संकलन कालजयी रचनाओं में सम्मिलित होगा। ऐसी हम आशा करते हैं।

अब यह पुस्तक प्रकाशक की वेबसाइट, अमेज़ोन एवं फिलिप्कार्ट पर बिक्री के लिए लाइव हो गयी है। आप अपनी प्रति दी गयी लिंक Notion Press: https://notionpress.com/read/simatee-zindagee अमेज़ोन : https://www.amazon.in/dp/1638326304 एवं फिलिप्कार्ट से https://www.flipkart.com/simatee.../p/tme83114c7f74db... उक्त लिंक द्वारा खरीद सकते हैं।

ई- प्रदीप

ऑनलाइन पत्रिका